आत्मधर्म

मासिक : वर्ष-१९ • अंक-६ • फरवरी-२०२५

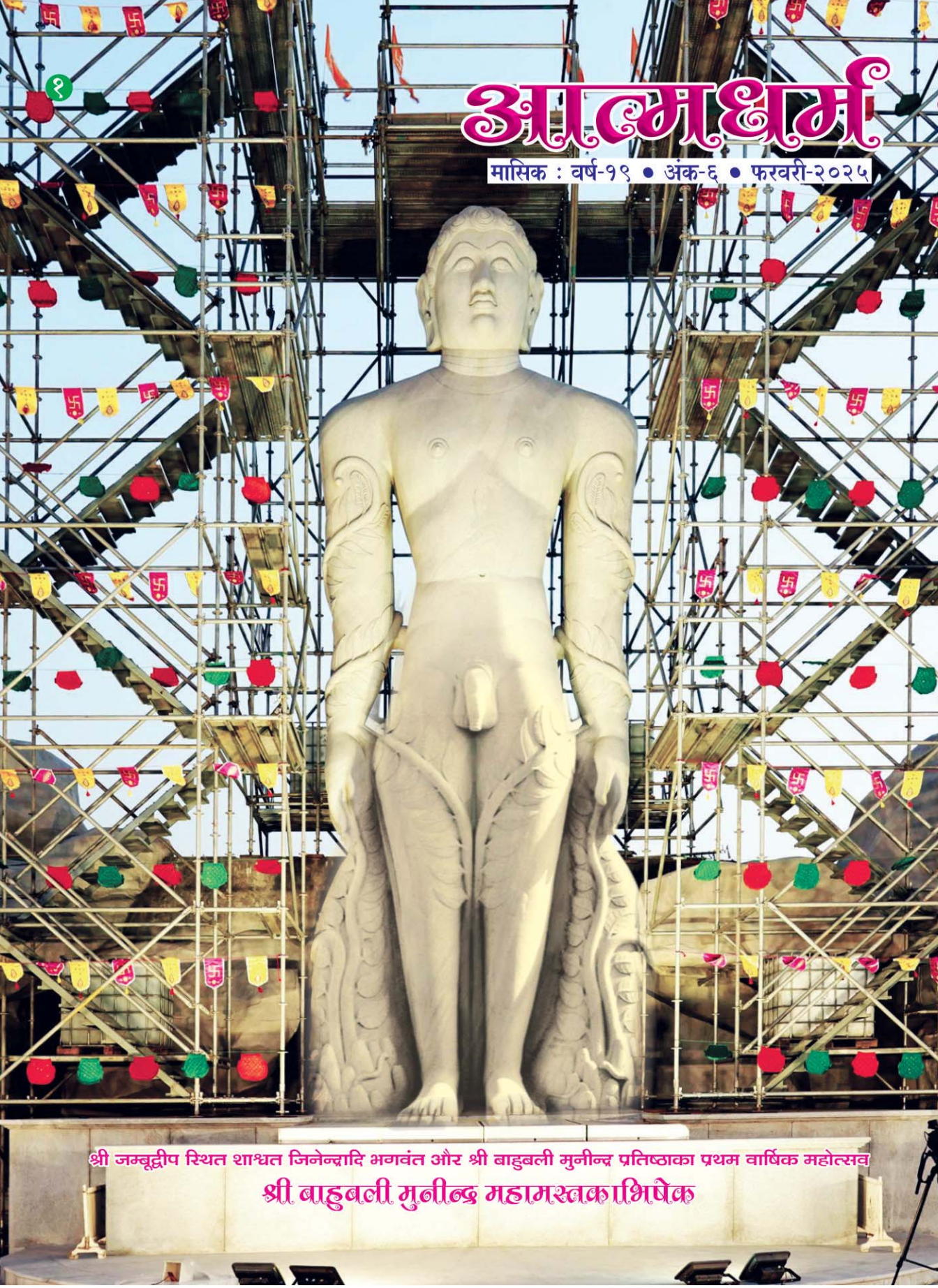

श्री जम्बूद्वीप स्थित शाश्वत जिनेन्द्रादि भगवंत और श्री बाहुबली मुनीन्द्र प्रतिष्ठाका प्रथम वार्षिक महोत्सव

श्री बाहुबली मुनीन्द्र महामस्तकाभिषेक

श्री पार्श्वनाथ भगवान श्री सीमंधरनाथ भगवान श्री धातकी विदेहस्थ भावि भगवान

प्रतिष्ठा महोत्सव प्रथम वार्षिक दिन

श्री वासुपूज्य भगवान श्री मल्लिनाथ भगवान श्री नेमिनाथ भगवान श्री पार्श्वनाथ भगवान श्री महावीर भगवान

वर्ष-19
अंक-6

आत्मधर्म

शाश्वत सुखका मार्ग दर्शानेवाली मासिक पत्रिका

वि. संवत 2080
February
A.D. 2025

परमागम श्री प्रवचनसार पर पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन

(गाथा-६० के प्रवचनमेंसे)

केवलज्ञान ही सुख है

बहुतसे जीव नमस्कार मंत्र बोलते है। नव लाख नमस्कार मंत्रका जाप जपते है लेकिन उसका भाव समझे बिना सम्यग्दर्शन अथवा सुख होता नहीं है। उस मंत्रके प्रथम पदमें ''णमो अरिहंताणं'' यह पद आता है। अरिहंतका स्वरूप अर्थात् केवलज्ञानीका स्वरूप कैसा होता है वह प्रथम जानना चाहिये।

जिन्होंने मिथ्यात्व, अज्ञान, राग और द्वेषका सर्व प्रकारसे नाश करके सर्वज्ञपना स्वयंमें प्रकट किया उन्हें अरिहंत कहते है वैसे ही जो जीव स्वयंका स्वभाव शुद्ध है ऐसी श्रद्धा करके पर्यायमें होनेवाले मिथ्यात्व, राग-द्वेष और अज्ञानका नाश करके पूर्ण विकास कर सकता है ऐसी श्रद्धा-ज्ञान करे तो उसने अरिहंत भगवानका यथार्थ नमस्कार किया और यथार्थ नमस्कार मंत्र सीखा–ऐसा कहा जाता है।

वह केवलज्ञान सुखरूप है वह इस गाथामें ज्ञानके साथ अविनाभावी सुखको अभेद कहकर वर्णन किया है।

(१) विकारका परिणमन दुःख हो सकता है लेकिन केवलज्ञानमें विकार होता नहीं है इसलिये वहाँ सुख है और वह सुखरूप परिणमित हो रहा है, केवलज्ञान पलटता है लेकिन

उसमें दुःख नहीं है। आनंदकी ऐसी की ऐसी नवीन नवीन पर्याय प्रकट हो रही हैं।

अज्ञानीके खेदके स्थान घातिकर्म है ऐसा कहा है। यह कथन व्यवहारका (निमित्तका) है। मिथ्या अवस्थामें जीवके मोहके परिणाम वह ही खेदका कारण है। अज्ञानी जीव शरीर मेरा, पैसा मेरा, कुटुम्ब मेरा ऐसा मानता है। प्रत्येक पदार्थके प्रति ममता करके भले-बुरेकी बुद्धि करता है, पुण्यके भाव हो तो लाभ हो, पुण्य करते करते धीरे धीरे धर्म होगा ऐसा अज्ञानी मानता है, जैसे धतूराका नशा किया मनुष्य बाह्य पदार्थोंको लाल-पीला देखता है और जैसा है वैसा उसे दिखाई नहीं देता तथा मदिराके घेनमें स्त्रीको माता कहे और माताको स्त्री कहता है वैसे ही अज्ञानी जीव शरीर ठीक हो तो धर्म होता है, कर्म मुझे हेरान करते है, पुण्यसे लाभ होता है ऐसी मान्यतारूपी महान मदिराका पान किया है, अतत्में तत् बुद्धि करता है अर्थात् कि स्वयंका स्वरूप परपदार्थोंमें और परभावमें मानता है और परका स्वरूप स्वयंमें मानता है। ऐसे महामोहका परिणाम जीव स्वयं उपस्थित करता है। बाह्य पदार्थोंको इष्ट अनिष्ट मानकर थक जाता है और खेद किया ही करता है।

अज्ञानी जीव ज्ञेय पदार्थको रागका कारण मानता है तथा कोई सम्बन्धीकी मृत्यु अथवा अकस्मातकी जानकारी हुई इसलिये राग हुआ ऐसा मानता है। ऐसा मोहके परिणाम जीव जब करता है तब घातिकर्म निमित्त स्वयं उदयरूप होता है अर्थात् कर्मोंने अज्ञानी जीवको मोह कराया ऐसा उपचारसे कथन करनेमें आता है।

सम्यदृष्टि जीव परज्ञेयोंको रागका कारण मानते नहीं और बाह्य संयोगी-वियोगी पदार्थोंके ज्ञानको रागका कारण मानते नहीं है। अस्थिरतामें स्वयंकी कमजोरीके कारण राग होता है इतना अंश अल्प अस्थिरताका दुःख है। केवली भगवानको परिपूर्ण ज्ञान प्रकट हो गया है। सर्व प्रकारसे समाधान वर्तता है।

केवली भगवानको तत्में अतत्बुद्धिका नाश हो गया है और साधकदशामें कमजोरीके कारण अल्पखेद होता था वह अल्पखेद भी केवली भगवानको होता नहीं है। केवली भगवान परिपूर्ण सुखी है। केवलज्ञान आनंदरूप परिणमित हो गया है।

महाविदेहक्षेत्रमें क्रोडपूर्वकी आयुष्यवाला जीव उसकी पांचवीं पीढीके छोटे बालककी मृत्यु होने पर खेद करता नहीं है क्योंकि वह बहुत परिवार देखकर वृद्ध हुआ

शुकूलध्यान दीपक जगाया प्रभुने,
हरा तम कुबोधं स्वयं ज्ञानभूने । ३७ ।

है। इतने विशाल परिवारमें उसका खेद कौन करे? वैसे ही केवलज्ञान पक्व होकर ज्ञानवृद्ध हुआ है, जगतमें क्या क्या हुआ, क्या हो रहा है और क्या होनेवाला है? ऐसे अनंत ज्ञेय उनके ज्ञानमें जाननेमें आ गये है, किसीका अकस्मात या कोई नई पर्याय बनती नहीं है। (अज्ञानीको मालूम नहीं होनेके कारण अचानक हुआ ऐसा कहता है।)

मिथ्यात्वदशामें एक ज्ञेय पश्चात् एक ज्ञेयको क्रमसे जानने पर खेद होता था जब कि भगवानको एक ज्ञेय पश्चात् दूसरा ज्ञेय ऐसा होता नहीं है। अर्थात् ज्ञानको कही रुकना पड़ता नहीं है। सभी एक साथ जाननेसे किंचित् भी खेद होता नहीं है इसलिये केवलीप्रभुको परिपूर्ण सुख है। ऐसी दशा प्रकटनेसे घातिकर्मका स्वयं नाश हुआ है इसलिये घातिकर्मोंके अभावसे केवली भगवानको सुख प्रकट हुआ ऐसा कहा जाता है।

(२) जैसे दिवार पर एक चित्र अंकित हुआ हो उसे सामान्यरूपसे एक साथ देखनेमें आता है। इसप्रकार तीन कालके और तीन लोकके पदार्थ एक साथ चित्रित दिवारकी भांति जाननेमें आ जाते हैं। कोई वस्तु अव्यवस्थित दिखाई नहीं देती। भविष्यमें क्या होनेवाला है ऐसी कोई भी वस्तु केवलज्ञानके बाहर होती नहीं है। ऐसी दशा प्रकट करना वह सुखरूप है।

कोई प्रश्न करता है कि आप तेरहवें गुणस्थानकी बात क्यों कर रहे हो? उसका उत्तर इस प्रकार है कि संसारमें अल्प धनवाला अधिक धन लाभका प्रयत्न करता है वैसे यहाँ पर भी जीव चैतन्यके भान सहित केवलज्ञान प्रकट करनेकी भावना भाता है। ऐसा यथार्थ ज्ञान करे तो अकस्मात कुछ नहीं होता है ऐसी श्रद्धा करे और परपदार्थमें अथवा शाता-अशाताके प्रसंगमें ऐसा किया होता तो अच्छा रहता ऐसी परपदार्थको ठीक-अठीक करनेका विचार-विकल्पका नाश होकर शांति होती है।

संसारमें भी अपने पुत्रने अशाताके उदयमें कुछ रुपये सट्टामें गँवा दिये हो और उसको मालूम पडे तो विचार करता है कि पुत्रको डाटूँगा तो पुत्र शर्मके मारे आपघात कर लेगा इसलिये ऐसा करना ठीक नहीं है। जितने रुपयेका नुकशान हुआ उतना उसके हिस्सेमें कम आयेगा। अधिक थे तो भी उसीके ही थे और कम हुए तो भी उसीके ही है, रुपये मेरे नहीं है मुझे तो उसको ही देना था। ऐसा कोई जीव समाधान न करे और रुपये मेरे है ऐसा

श्री पद्मप्रभ जिन-स्तुति	स्वमत श्रेष्ठताका धरैं मद प्रवादी, सुनें जिनवचनको तजें मद कुवादी;

सोचकर आकुलताका वेदन करता है। दूसरा जीव रुपये गये तो उसके गये ऐसा सोचकर आकुलता मंद करता है।

दोनोंके संयोगों तो एक ही है फिर भी साधारण लौकिक समाधान करता है। इस प्रकार परलक्षसे एक प्रतिकूलतामें समाधान करनेका जीवमें सामर्थ्य है तो अनंत प्रतिकूलताएँ आने पर भी जीवमें स्वलक्षसे समाधान करनेका अनंत सामर्थ्य विद्यमान रहा हुआ है।

संयोगों जीवको प्रतिकूल नहीं है। संयोगोंका ज्ञान स्वभावको प्रतिकूल नहीं है। प्रतिकूलता, अनुकूलता ज्ञानमें है ही नहीं। ज्ञेयोंमें भी प्रतिकूलता अनुकूलता है ही नहीं। ऐसा जब जीव पूर्णरूपसे समाधान करे और सभी अवस्था परसे लक्ष हटाकर स्वयं ज्ञाता-दृष्टा हो जाय तो समाधान और शांति होती है। कारण स्वभाव स्वयं ही समाधान स्वरूप है ऐसा ज्ञानमें समाधान वर्ते तो परका बदलाव होने पर आकुलता होती नहीं है ऐसा समाधान और सुख स्वयंके स्वभावमेंसे आता है। जैसे आमकी छोटी गुठलीमेंसे आमवृक्ष और आम होनेका सामर्थ्य है। वैसे चैतन्य स्वभावमें केवलज्ञानरूपी आम्रवृक्षका आम होनेका सामर्थ्य है वह सामर्थ्य परपदार्थ, निमित्त रागकी अपूर्णदशामें नहीं है।

केवलज्ञानका माहात्म्य आने पर स्वभावका माहात्म्य आता है और परवस्तु और पुण्यका माहात्म्य छूट जाता है और स्वभावमें एकाग्र होने पर केवलज्ञान प्रकट होता है और वह ही सुखरूप है। (क्रमशः)

(पृष्ठ २२ का शेष भाग) (एक ही पर्यायमें परस्पर दो भाव...)

भावकर्म-रागद्वेष आदि होते हैं वह तो आत्माका औदयिकभाव है, वह भाव निश्चयसे आत्माका है, तथा कर्म उसमें निमित्त है। इसलिये उसे कर्म कहेना वह उपचारसे वह–व्यवहारसे है। राग-द्वेषादि उदयभाव भी निश्चयसे आत्माके है, क्योंकि वह आत्माकी पर्यायमें होते है, तथा शरीर, कर्म आदि निश्चयसे जड़की परिणति है उसके साथ जीवको निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है।

दृष्टिके विषयमें तो ऐसा कहा जाता है कि रागादि वह आत्माके है ही नहीं, वह निश्चयसे जड़के है, लेकिन वहाँ द्रव्यदृष्टिकी बात है और यहाँ तो दो द्रव्यकी पृथक्ता दर्शाते है। जिस द्रव्यका जो भाव हो उसे उसका कहेना वह भी निश्चय है। रागको आत्माका कहेना वह भी निश्चय है। राग निश्चयसे आत्माका है। कर्मसे राग हुआ ऐसा मानना वह भ्रम है। संसारी जीवके ही रागादि है, कर्मके नहीं है, उस रागादिभावको कर्मके मानना वह भ्रम है। इसलिये निश्चयसे ऐसा है और व्यवहारसे ऐसा है–इसप्रकार एक ही वस्तुमें (एक ही अपेक्षासे) दो भाव मानना वह भ्रम है, किन्तु पृथक् पृथक्भावोंकी अपेक्षासे नयोंकी प्ररूपणा है। मिथ्यादृष्टिको अनेकांतके स्वरूपकी खबर नहीं है।

श्री इष्टोपदेश पर पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचन

प्रवचन नं.-३८ (गाथा-३५)

स्वतंत्रताकी घोषणा

यहाँ पद्मनंदी पंचविंशतिके श्लोकका आधार दिया है कि ऐसा कोई बड़ा वज्रपात हो अथवा घोर निंदा करे कि जिसके भयसे भयभीत लोग मार्ग छोड़कर इधर-उधर भटकने लगे। ऐसे वज्रपातसे भी अतुल शांति संपन्न योगीगण योगसे (ध्यानसे) चलित होते नहीं है। संपूर्ण दुनिया चलायमान हो जाय फिर भी मुनि अपनी एकाग्रतासे चलायमान होते नहीं इसलिये ज्ञानीको कोई अज्ञानी करनेमें समर्थ नहीं है।

इस गाथामें 'गुरुसे ज्ञान होता है' ऐसे व्यवहारका पक्ष नरम हो जाता है ऐसी शिष्यकी आशंका है। लेकिन वास्तवमें तो निश्चय जिन्हें प्रकट हुआ है उसे गुरुके बहुमान आदिका भाव-व्यवहार आये बिना रहता नहीं इस बातको आगे कहेंगे। निश्चयके साथ व्यवहार आता ही है। स्वयं गति करते जीव-पुद्गलको धर्मास्तिकायका निमित्त होता ही है, जैसे स्वयं पुरुषार्थ करते जीवको गुरुका निमित्त होता ही है। और उस पुरुषार्थी जीवको गुरुका बहुमान-विनय आदिके भाव भी होते ही है।

यह ३५वीं गाथा बहुत ऊँची है। इस गाथा परसे हम पूर्वसे कहते आये है कि निमित्त धर्मास्तिकायवत् है। आचार्य पूज्यपादस्वामी ऐसा इष्ट उपदेश करते है। यह ही इष्ट उपदेश है। निमित्तसे हो और निमित्त न हो तो कार्य न हो ऐसा उपदेश इष्ट-उपदेश नहीं है। ऐसा वस्तुका स्वरूप ही नहीं है।

चैतन्य हीरा चैतन्यप्रकाशसे परिपूर्ण है। उसका ज्ञानप्रदीपसे अर्थात् ज्ञानदीपकके प्रकाशसे मोहरूपी मिथ्या अंधकारका नाश हो जाता है। गुरुके उपदेशसे, मंदकषायसे अथवा कर्म नष्ट होनेसे मिथ्या अंधकार नष्ट होता नहीं। एक ज्ञानसूर्यसे ही मोहांधकार नष्ट होता है।

भगवान आत्मामें तो ज्ञान और आनंदका राज है। वीर्यने स्वयंका प्रताप-बादशाही अखंड रखता है, उस वीर्यके साम्राज्यमें अन्य किसीका प्रवेश कैसे होगा ? ज्ञान, आनंद, सुख, वीर्यस्वरूप प्रभु स्वयं ही है उसे बाह्य शरीरादिमें सुखको खोजने जाना पड़े ऐसा नहीं

यथा मस्त हाथी सुनें सिंहगर्जन,
तजैं मद तथा मोहका हो विसर्जन।३८।

है। फिर भी भ्रमणासे जीव 'शरीरसे सुखी तो सर्व बातसे सुखी' ऐसी मिथ्या कल्पना कर रहा है। लेकिन जिन्होंने ज्ञानप्रदीप द्वारा ऐसी मिथ्या कल्पनाका नाश किया है उसे उनकी श्रद्धाको कोई डिगा सकता नहीं है।

जिन्हें अंदरसे श्रद्धा, ज्ञान, आनंदका जोर है उन्हें बाह्यमें अग्निकी वर्षा हो या वज्रपात हो कि निंदाके प्रहार हो लेकिन वह अपने श्रद्धा, ज्ञानसे डिगते नहीं है और जिन्हें अंदरका जोर नहीं ऐसे अज्ञानी भयभीत होकर भागने लगते हैं।

यहाँ किसीको शंका होती है कि इसमें तो निमित्तोंका निराकरण हो जायेगा अर्थात् निमित्त बिना चलेगा नहीं और निमित्त न हो तो कार्य ही नहीं होगा इस बातका इसमें खंडन हो जाता है, उसके उत्तरमें यहाँ मुनिराज कहते है कि स्वयंके हित-अहितके कार्यमें गुरु तथा शत्रु आदि निमित्तमात्र है चैतन्य प्रभु ही स्वयंको शरणरूप है, हितरूप है, वहाँ गुरु क्या हित करे? और स्वयं स्वयंके अज्ञानभावसे वैरभाव उत्पन्न करे वहाँ शत्रु क्या करे? गुरु और शत्रु आदि तो निमित्तमात्र है।

प्रकृत कार्यके उत्पादमें तथा विध्वंसमें अन्य द्रव्य मात्र निमित्त है। वास्तवमें कोई कार्य होनेमें या बिगड़नेमें उसकी योग्यता ही साक्षात् साधक है।

पंचाध्यायमें एक श्लोकमें आता है कि प्रत्येक द्रव्य स्वयं सत् है, स्वयंसे बिगड़ते है और स्वयंसे ही सुधरते है उसमें किसी वस्तुकी आवश्यकता नहीं है। गलत संगसे बिगड़े और अच्छे संगसे सुधरता है ऐसा व्यवहारका कथन है, घड़ा कुम्हारसे बनता है और घड़ेकी सम्हाल न रखे तो तूट जाय यह बात मिथ्या है। स्वयं स्वयंकी योग्यतासे ही सर्वकार्य होते है। यह सब दुनियाकी मान्यतासे विपरीत बात है। वह जैसी है वैसी ही समझनी पड़ेगी।

निमित्तका निराकरण

श्री इष्टोपदेशकी ३५वीं गाथा चलती है।

कोई भी पदार्थके कार्यमें–पर्यायके पलटनेके कालमें स्वयंकी योग्यता न हो तो अन्य कोई पदार्थ वह कार्य कर सकता नहीं है। जीवके विकारी या अविकारी कोई भी भावके कार्यकालमें जीवकी स्वयंकी स्वाभाविक योग्यता न हो तो निमित्त कुछ भी कार्य कर सकता नहीं है।

तुही तीन भूमें परमपद प्रभु है,
करे कार्य अद्भुत परम तेज तू है;

इस बातको सिद्ध करने हेतु अभव्य जीवका दृष्टांत दिया है कि अभव्य जीवको चाहे कितना भी समझाओ फिर भी वह समझनेके लायक ही नहीं है तो निमित्त उसे क्या करे? और धर्मीजीव कोई लाख प्रयत्न द्वारा धर्मसे चलित करना चाहे फिर भी चलित होते नहीं है। इसलिये कहा है कि वास्तवमें निमित्त कुछ करता ही नहीं है लेकिन उपादानसे कार्य हो तब जो उपस्थित हो उसे निमित्त कहा जाता है।

यहाँ शिष्यको शंका होती है कि आप ऐसा कहते हो तो फिर इसमें तो बाह्य निमित्तका तो इसमें निराकरण हो जाता है। अर्थात् कि निमित्तका कोई प्रभाव रहता नहीं है। उसका तो खंडन हो जाता है। तो फिर गुरुसे ज्ञान होता है, शत्रुसे नुकशान होता है यह बात तो रही ही नहीं। ऐसी शिष्यको शंका होने पर गुरु ऐसा कहते है कि हाँ ऐसा ही है। गुरुसे ज्ञान होता हो तो अभव्यको भी सम्यक्ज्ञान होना चाहिये और निमित्तसे नुकशान होता हो तो ज्ञानीको भी अज्ञानी किया जा सकता है, लेकिन ऐसा होता नहीं है।

गुरुसे ज्ञान होता नहीं फिर भी गुरुकी महत्ता इतनी है कि जब शिष्यको ज्ञान होता है तब उसे गुरुके प्रति बहुमान आये बिना रहता नहीं है। निश्चय हो वहाँ व्यवहार आये बिना रहता नहीं है ऐसी ही वस्तुस्थिति है, लेकिन व्यवहार हो तो निश्चय हो यह सिद्धांत विरुद्ध संपूर्ण बात है। जीव या अजीव कोई भी परपदार्थके कार्यका वास्तविक कारण तो एक ही है, निश्चय ही वास्तविक कारण है। व्यवहार तो आरोपित कारण है।

निमित्त भी एक पदार्थ है लेकिन उपादानका कार्य उससे होता नहीं है। किसी भी पदार्थकी किसी भी पर्याय अपने कालसे स्वयं होती है उसमें संयोग कोई बदलाव करते नहीं है। आचार्योंने समय समयकी योग्यताका कितना वर्णन किया है।

गुरुने जो कहा उसे यथार्थ समझकर शिष्य प्रश्न करता है कि निमित्त कुछ करता नहीं तो फिर निमित्तका खंडन हो जाता है। इस विषयमें गुरु उत्तर देते है कि कोई भी वस्तुके प्रकृत कार्यमें अर्थात् होनेयोग्य कार्यके उपादानमें तथा विध्वंसनमें बाह्य वस्तु निमित्तमात्र है।

जीव विकार करता है वह स्वयंकी योग्यतासे करता है उसमें कर्म तो निमित्तमात्र है। वैसे शरीरमें ओपरेशन आदि क्रिया होती है तो उसकी पर्याय अपने कालसे स्वयं होती है उसमें छुरी आदि साधन तो निमित्तमात्र है। उससे ओपरेशनका कोई कार्य होता नहीं है।

(क्रमशः) ✻

जगत नेत्रधारी अनंतं प्रकाशी,
रहे नित सकल दुःखका तू विनाशी।३९।

अध्यात्म संदेश

(रहस्यपूर्ण चिट्ठी पर परम पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचन)

स्वानुभवकी ओर ढलती विचारधारा
स्वानुभव ही आराधनाका सच्चा समय है

''बड़े नयचक्र-ग्रन्थमें भी ऐसा ही कहा है; यथा—

तच्चाणेसणकाले समयं बुज्झदि जुत्तिमग्गेण।
णो आराहणसमये पच्चक्खो अणुहवो जह्मा॥२६६॥

तत्त्वके अन्वेषणकालमें समयको अर्थात् शुद्धात्माको युक्तिमार्गसे अर्थात् नय-प्रमाण द्वारा पहले जाने, इसके बाद आराधनाके समयमें अर्थात् अनुभवके कालमें वह नयप्रमाण नहीं है, क्योंकि वहाँ प्रत्यक्ष अनुभव है;—जैसे रत्नके खरीदते समय तो अनेक विकल्प करते हैं परन्तु जब उसे प्रत्यक्ष पहिनते हैं तब विकल्प नहीं है, पहिननेका सुख ही है। इसप्रकार सविकल्प द्वारा निर्विकल्प अनुभव होता है।''

देखिये, चैतन्यका अनुभव समझानेके लिये दृष्टांत भी रत्नका दिया; उत्तम वस्तु समझानेके लिये दृष्टांत भी उत्तम वस्तुका दिया। रत्न लेनेको कौन निकले ?—कोई मामूली आदमी रत्न लेनेको नहीं आता परन्तु उत्तम पुण्यवान मनुष्य रत्नके खरीदनेके लिये आता है; वैसे यहाँ भी जो उत्तम-जीव आत्मार्थी जीव चैतन्यके अनुभवरूप रत्न लेनेको आया है इसकी बात है; ऐसे जीवको पहले सविकल्प विचारधारामें आत्माके स्वरूपका अनेक प्रकारसे चिंतन होता है। जैसे रत्नका खरीदनेवाला खरीदते समय तो उसके सम्बन्धमें अनेक विचार करता है, रत्नकी जात कैसी, उसकी झलक कैसी, वजन कितना, आकृति कैसी, रंग कैसा, मूल्य कितना, कण्ठमें पहनने पर कैसी शोभा दिखेगी,—इत्यादि अनेक प्रकारके तर्कोंसे रत्नके स्वरूपका बराबर अच्छी तरहसे निर्णय करता है, और बादमें उस रत्नहारकी कीमत देके खरीदकर जब अपने कंठमें पहिने तब तो हारकी प्राप्तिके संतोषका सुख ही रहता है, अन्य विकल्प वहां नहीं रहते। वैसे चैतन्यरत्नकी प्राप्तिका उद्यमी जीव पहले तो सविकल्प विचारके द्वारा अनेक तरहसे अपने स्वरूपका चिंतन करता है : मेरा स्वभाव द्रव्यदृष्टिसे शुद्ध सिद्धसमान है, पर्यायदृष्टिसे मेरेमें मलिनता है; निश्चयसे शुद्धस्वभावके ही आश्रयसे मोक्षमार्ग है; रागको यदि मोक्षका कारण माना जाय तो आस्रव व संवर तत्त्व भिन्न नहीं रहते; उपयोगको अन्तर्मुख

तुंही चन्द्रमा भविकुमुदका विकाशी,
किया नाश सब दोष मल मेघराशी;

करनेसे ही शुद्धात्माकी अनुभूति होती है और तभी आनंदका वेदन प्रकट होता है;–ऐसे अनेक प्रकार युक्तिसे, नय-प्रमाणादिसे निर्णय करे। आत्माका स्वरूप कैसा ? उसकी शक्तियाँ कैसी ? उसका कार्य कैसा ? उसके प्रदेश कितने ? उसका भाव कैसा ? स्वभावभाव कौनसा ? विकारीभाव कौनसा ? उपादेयरूप शुद्धस्वरूप कैसा ? इसके अनुभवका सुख कैसा ? इसके लिये प्रयत्न किस प्रकारका ?—ऐसे अनेक प्रकारसे विचारके द्वारा अन्वेषण करते समय साथमें विकल्प भी होता है; परन्तु इसके बाद, सभी ओरसे स्वरूपका निश्चय करके, इसकी उत्कृष्ट महिमा लाके प्रयत्नपूर्वक जब उपयोगको अन्तर्मुख करके आत्माका प्रत्यक्ष अनुभव करता है तब तो उस अनुभवके आनंदका ही वेदन रहता है, पहलेके कोई विकल्प वहाँ नहीं रहते।—इस प्रकारसे सम्यग्दृष्टिको निर्विकल्प अनुभव होता है। ऐसा अनुभव करना वही आराधनाका सच्चा समय है; ऐसा जो अनुभव वही सच्ची आराधना है। पहले विचारदशामें विकल्प था इसलिये सविकल्प द्वारा यह अनुभव हुआ–ऐसा कहा, परन्तु वास्तवमें तो विकल्प द्वारा अनुभव नहीं हुआ, विकल्प टूटा तभी साक्षात् अनुभव हुआ। और, इस अनुभवको 'प्रत्यक्ष' कहा है,—'पच्चक्खो अणुहवो जह्मा।'

(प्रवचनसार गाथा ८०में मोहक्षयका उपाय दर्शाते हुए ऐसी ही शैलीसे वर्णन किया है; वहाँ प्रथम अरिहन्तके द्रव्य-गुण-पर्यायकी पहचानके द्वारा अपने स्वरूपको विचारमें लेकर, बादमें साक्षात् अनुभव करता है–यह दिखलाया है।)

'विचार करनेमें तो विकल्प होता है' ऐसा समझके कोई जीव विचारधारामें ही न प्रवर्ते, तो कहते हैं कि रे भाई ! विचारमें अकेले विकल्प ही तो नहीं है; 'विचार'में ज्ञान भी साथ साथ तत्त्वनिर्णयका कार्य कर रहा है। इनमेंसे ज्ञानकी मुख्यता कर, और विकल्पको गौण बना दे। ऐसे स्वरूपका अभ्यास करते करते ज्ञानका बल बढ़ जायेगा तब विकल्प टूट जायेगा और ज्ञान ही रह जायगा, अतएव विकल्पसे भिन्न ज्ञान अंतर्मुख होके स्वानुभव करेगा। परन्तु जो जीव तत्त्वका अन्वेषण ही नहीं करता, आत्माकी विचारधारा ही जो नहीं चलाता उसे तो निर्विकल्प स्वानुभव कहाँसे होगा ? अतएव जो जिज्ञासु होकर स्वानुभव करना चाहता है, वह यथार्थ तत्त्वका अन्वेषण करके तत्त्वनिर्णय करता है और स्वभाव सन्मुखकी विचारधारामें प्रवर्तता है, वह जीव अपना कार्य बीचमें अधूरा नहीं छोड़ेगा; वह पुरुषार्थ द्वारा विकल्प तोड़के, स्वरूपमें उपयोग जोड़के निर्विकल्प-स्वानुभव करेगा ही। स्वभावके लक्षसे अनुभवके लिये जो कटिबद्ध हुआ वह विकल्पमें रुकनेवाला नहीं, विकल्पमें संतुष्ट होनेवाला नहीं; वह तो स्वानुभवकी कृतकृत्यदशा प्रकट करके ही रहेगा। इसलिये कहा है कि 'कर विचार तो पाम।'

(क्रमशः) ✻

अनुभवप्रकाश पर प्रवचन

(गतांकसे आगे)

मिश्रधारामें दो प्रकार वर्तते हैं। जितनी श्रद्धा, ज्ञान और एकाग्रता की वह निश्चय है, तथापि जितना राग वर्तता है तथा ज्ञान–दर्शनकी हीनता वर्तती है, ज्ञान अनन्तवें भाग, दर्शन अनन्तवें भाग, आनन्द अनन्तवें भाग वर्तता है—ऐसा धर्मी जानता है—वह व्यवहार है।

अज्ञानी मानता है कि बाह्य पदार्थोंको छोड़ना वह व्यवहार है। वह मूढ़ है। बाह्य पदार्थोंको आत्मा छोड़ ही नहीं सकता। परपदार्थोंसे आत्मा भिन्न है और राग–द्वेष आत्माका स्वरूप नहीं है। —ऐसी प्रतीति करनेके पश्चात् रागादि परिणाम रहें उनका ज्ञान करना चाहिए।

पर्यायमें चारित्र नहीं होने पर भी चारित्र मान लेना वह भूल है। स्वभावके अवलम्बनसे शान्तिमें वृद्धि हो और राग कम हो जाए तब चारित्र होता है। मात्र २८ मूलगुणोंके विकल्पको व्यवहार नहीं कहते जिसे आत्मप्रतीति हो उसे व्यवहार होता है।

जड़की पर्याय ऐसी ही हो ऐसा आग्रह ज्ञानीको नहीं है; रागका भी आग्रह नहीं है। जिस प्रकारका राग आए उसे ज्ञान जानता है। मैं शुद्ध चैतन्य पूर्णानन्द हूँ, असंख्यप्रदेशी हूँ; शरीरप्रमाण क्षेत्र परिमित है फिर भी स्वभाव अपरिमित है। ऐसे स्वभावकी प्रतीति करके स्वरूपको बराबर समझा। श्रद्धा यथार्थ करने पर भी रागादि परिणाम वर्तते हैं और केवलज्ञान पूर्ण नहीं है ऐसा जानना चाहिए। जो राग उठता है वह भूमिकानुसार उठता है, वह स्वकाल है। कालभ्रमसे वे परिणाम होते हैं उनको जानना वह व्यवहार है, वह आदरणीय नहीं है। अखण्ड स्वभावको जानना वह निश्चय है—इसप्रकार दोनोंका ज्ञान करना वह प्रमाण है।

श्री अमृतचन्द्राचार्यने श्री समयसारकी टीकामें स्पष्ट किया है कि व्यवहारनय जाना हुआ उस काल प्रयोजनवान है। चतुर्थवालेको दर्शनका क्षयोपशमभाव वर्तता हो तो क्षयोपशम जानना और क्षायिकभाव वर्तता हो तो क्षायिकभाव जानना। जैसा है वैसा जानना।

आत्माकी प्रतीति होने पर भी राग और अल्पज्ञता है, इसलिए उस दशाको मिश्रदशा

श्री पुष्पदंत जिन-स्तुति	प्रगट सत् वचनकी किरणमाल व्यापी, करो मुझ पवित्र तुही शुचि प्रतापी।४०।

कहते हैं। जो पर्याय जैसी है वैसी जानना। अल्प विकास हुआ हो उसे अधिक विकसित नहीं मानना और अधिक विकसित नहीं हुई इसलिए खेद नहीं करना।

मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २६६में कहा है कि—''व्यवहारनय स्वद्रव्य–परद्रव्य अथवा उनके भावोंको अथवा कारण–कार्यादिकको किसीको किसीमें मिलाकर निरूपण करता है, इसलिए ऐसे ही श्रद्धानसे मिथ्यात्व है, इसलिए उसका त्याग करना। तथा निश्चयनय उन्हींका यथावत् निरूपण करता है तथा किसीको किसीमें मिलाता नहीं है, इसलिए ऐसे ही श्रद्धानसे सम्यक्त्व होता है इसलिए उसका श्रद्धान करना।''

''प्रश्न :—यदि ऐसा है तो जिनमार्गमें दोनों नयोंका ग्रहण करना कहा है उसका क्या कारण ?

उत्तर :—जिनमार्गमें किसी जगह तो निश्चयनयकी मुख्यतासहित व्याख्यान है उसे तो ''सत्यार्थ ऐसा ही है'' ऐसा जानना, तथा किसी जगह व्यवहारनयकी मुख्यतासहित व्याख्यान है उसे ''ऐसा नहीं है परन्तु निमित्तादिकी अपेक्षासे यह उपचार किया है'' ऐसा जानना, और इसप्रकार जाननेका नाम ही दोनों नयोंका ग्रहण है, परन्तु दोनों नयोंके व्याख्यानको समान सत्यार्थ जानकर ''इसप्रकार भी है और इसप्रकार भी है,'' ऐसे भ्रमरूप प्रवर्तनसे तो दोनों नय ग्रहण करना कहा नहीं है।''

सर्व जीवोंको समान शक्तिरूपसे परमात्मा कहा है। निगोद पर्यायमें परमात्मदशा प्रकट नहीं है, वहाँ पर्याय अत्यन्त हीन है। जिस प्रकार तिलमें तेल शक्तिरूपसे है, प्रकट नहीं है। तेल निकाले तब प्रकट होता है। तिलमें तेल मानकर पूड़ी तलना चाहे तो तिल और आटा दोनों बिगडेंगे। आत्मामें शक्तिरूपसे परमात्मा है ऐसा न मानकर पर्यायमें भी परमात्मा मान ले तो चार गतियोंमें परिभ्रमण करेगा। आत्माकी प्रतीति और लीनता करके जब तक परमात्मदशा प्रकट न हो तब तक पर्यायमें परमात्मपना नहीं मानना चाहिए, तथापि शक्तिरूपसे परमात्मा है ऐसा न माने तो पर्यायमें परमात्मा नहीं होगा। शक्तिसे केवलज्ञानरूप हूँ और पर्यायसे पामर हूँ, —ऐसा जानना चाहिए।

आत्मवस्तु है—ऐसी श्रद्धा एवं लीनता करके एकाग्र हो वह उपादेय है। यह उपादेय है, —ऐसा विकल्प वह उपादेय नहीं है और जितना राग तथा अल्पज्ञता दूर होती जाती है उसे हेय कहते हैं, हेय करना नहीं पड़ता। हेयका ज्ञान व्यवहारनयका विषय है और उपादेयका ज्ञान वह निश्चयनयका विषय है।

हे सुविधि! आपने कहा तत्त्व,
जो दिव्यज्ञानसे तत् अतत्त्व;

आत्मामें ऐसा विश्वास हुआ कि मैं शुद्ध चिदानन्द हूँ; —ऐसी दृढ़ प्रतीतिको कोई बदलनेमें समर्थ नहीं है। उसे क्षायिक सम्यक्त्व कहते हैं। वह श्रुतकेवली, केवली भगवान और तीर्थंकरके समीप होता है। बाहर संसारमें दिखाई देता हो तथापि धर्मीको चैतन्यज्योतिका विश्वास आया है, उससे डिगानेमें कोई समर्थ नहीं है, स्वयं उससे विमुख हो जाए ऐसा नहीं है। अखण्ड वस्तु आनन्दकन्द है, ऐसी प्रतीति हुई है उसे क्षायिकसम्यक्त्व कहते हैं। पर्यायमें निर्मलता प्रकट की और निमित्तरूपसे कर्म नहीं रहा। अब, उसमें प्रश्न करते हैं— आत्मामें ऐसी प्रतीति आई कि वह उससे विमुख नहीं होगा और पूर्णदशा लेकर ही रहेगा— ऐसी श्रद्धावानको सम्यक्पना पूर्ण प्रकट हुआ है कि अपूर्ण है ? यदि सम्यक् पूर्णभाव प्रकट हुआ हो तो सिद्ध हो जाना चाहिए क्योंकि एक गुण पूर्ण सम्यक् होने पर सर्वगुण पूर्ण सम्यक् हो जाते हैं और सिद्धदशा प्रकट होती है ?

यहाँ मिश्र अधिकारकी बात ली है। आत्मा आनन्दका पिण्ड है, ऐसी क्षायिक प्रतीति की उसे सम्यक् गुण पूर्ण हो गया है, इसलिए सर्व गुण पूर्ण हो जाना चाहिए—ऐसी शंका शिष्य करता है। उसका कारण यह है कि सम्यक्गुण सबमें विस्तृत है। श्रद्धागुणकी दशा पूर्ण निर्मल हो गई वह सम्पूर्ण आत्मामें व्याप्त है, इसलिए सर्व गुण पूर्ण हो जाना चाहिए— ऐसी शंका शिष्य करता है।

श्रेणिक राजाको क्षायिक सम्यक्त्व हुआ है। वे नरकमें से निकलकर तीर्थंकर होगे। सर्व गुण वर्तमानमें पूर्ण नहीं हैं, जिससे शिष्य प्रश्न करता है कि सम्यग्दर्शन पूर्ण निर्मल हुआ है और आत्मामें विभुत्व नामका गुण है जिससे एक गुण सम्पूर्ण आत्मामें व्याप्त है, इसलिए सर्व गुण पूर्ण होना चाहिए।

समाधान :—क्षायिकसम्यक्त्व होने पर भी परम सम्यक्भाव नहीं हुआ है क्योंकि सर्व गुण पूर्णरूप नहीं हुए हैं। भरत चक्रवर्तीको घरमें वैरागी कहा, इसलिए घरमें मुनिपना है ऐसा उसका अर्थ नहीं है। क्षायिकसम्यक्त्व हुआ है परन्तु सर्व गुण निर्मल नहीं हुए हैं। शिष्यने प्रश्न किया था कि एक गुण पूर्ण निर्मल होने पर सर्व गुण पूर्ण निर्मल हो जाना चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं है।

यह सब समझना चाहिए। समझे बिना धर्म नहीं होता। क्षायिक सम्यक्त्व होने पर भी सर्व गुण सम्पूर्ण निर्मल नहीं हुए हैं, अंशतः निर्मल हुए हैं, इसलिए मिश्रधारा रही है— ऐसा यहाँ बतलाते हैं। (क्रमशः) ✻

मुक्तिका मार्ग

(सत्तास्वरूप पर पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचन) (प्रवचन : ५)

सर्वज्ञदेवकी पहचान करनी चाहिए

इस सत्तास्वरूप ग्रंथमें मुख्यतया सर्वज्ञकी सत्ताका निर्णय करनेका और गृहीत मिथ्यात्वके त्यागका उपदेश दिया गया है। गृहीतमिथ्यात्व अर्थात् ग्रहण की गई विपरीत मान्यता; जन्म होनेके बाद जो विपरीत नई बात ग्रहण कर ली गई है उसे छुड़ानेकी बात सत्तास्वरूपमें खास कही गई है। अनादिकालसे जो विपरीत बात ग्रहण की गई है उसे (अगृहीत मिथ्यात्वको) छुड़ानेका उपदेश समयसारमें किया गया है। यह जीव जबतक स्थूल मिथ्यात्वको छोड़नेकी बात नहीं समझ सकता तब तक सूक्ष्म मिथ्यात्व छोड़नेकी बात भी उसके समझमें नहीं आ सकती। स्त्री, कुटुम्ब इत्यादि पर जो प्रेम है यदि उससे अधिक प्रेम वीतराग देव, गुरु, धर्म पर न हो तो समझना चाहिए कि उसके स्थूल गृहीत मिथ्यात्वका भी त्याग नहीं है।

जब तक सच्चे देव-गुरु और धर्मके प्रति भक्ति एवं तन, मन, धनको लगानेका उल्लास नहीं होता तथा पूर्वदशामें माने गये कुदेवादिके लिये जितना तन, मन, धन व्यय करता था उससे अधिक भक्ति तथा तन, मन, धन अपने सच्चे देव, गुरु और धर्मके लिये व्यय नहीं करता तब तक समझना चाहिए कि उसके स्थूल मिथ्यात्वका त्याग नहीं है। स्थूल मिथ्यात्वके बिना सूक्ष्म मिथ्यात्व दूर नहीं हो सकता। इस जीवने पहले अनन्तबार स्थूल मिथ्यात्वका त्याग किया है, किन्तु सूक्ष्म मिथ्यात्वका त्याग आज तक कभी नहीं किया। जिसके स्त्री, कुटुम्ब इत्यादि पर, देव, गुरु, शास्त्रसे भी अधिक प्रेम हो, समझना चाहिए कि वह तीव्र मिथ्यात्वके महारोगमें सड़ रहा है। यदि कोई कहे कि हमें देव-गुरुके प्रति प्रेम तो है किन्तु उधर कुछ उत्साह नहीं होता, सो समझना चाहिए कि उसकी यह बात झूठ है; अरे भाई ! तुझे अपनी स्त्री और बच्चोंके प्रति उत्साह होता है, उनके लिए तन, मन, धन खर्च करता है और उनके लिए अलग रूपया निकालकर रखता है, किन्तु यहाँ तुझे देव-गुरुके प्रति उत्साह नहीं होता, तब क्या इसका यह स्पष्ट अर्थ नहीं है कि तुझे देव-गुरुके प्रति प्रेम नहीं है ? यदि कोई देव-गुरुकी अपेक्षा स्त्री आदिके लिये अधिक उत्साहसे तन, मन, धन खर्च करे और देव- गुरु-धर्मके कार्योंमें निरुत्साह हो तो समझना चाहिए कि वह वीतरागको ठगता है, जिसका अर्थ यह है कि वह स्वयं अपनी आत्माको ही ठगता है। अपनेको वीतरागका सेवक कहलवाता है किन्तु वास्तवमें उसे

एकांत हरण सुप्रमाण सिद्ध;
नहिं जान सकैं तुमसे विरुद्ध ।४१।

वीतरागदेवके प्रति रुचि नहीं है, तब उसे शुभ-अशुभ निमित्तका भी विवेक करना नहीं आता तो वह शुद्ध उपादानको कैसे पहचानेगा ? जब तक सच्चे देव और सच्चे गुरुके प्रति उल्लास उत्पन्न नहीं होता तब तक अन्तरंगमें गृहीत मिथ्यात्वका तीव्र पाप बना ही रहता है।

जिसने अनुमानादिके द्वारा भी अपने ज्ञानमें सर्वज्ञका निर्णय नहीं किया हो और वह प्रतिदिन भगवानके दर्शन करनेको जाता हो तो उसको शुभभाव है किन्तु वह वीतरागका परमार्थ सेवक नहीं है। वीतरागका सच्चा सेवक कब बन सकता है ? भगवानका दास कब हो सकता है ? और भगवानके द्वारा कहे गये तत्त्वोंका श्रद्धान कब कर सकता है, तब, जब कि यह जानले कि भगवानने शास्त्रमें क्या कहा है ? और अनुमानादिसे सर्वज्ञके स्वरूपका सच्चा निश्चय हो गया हो; तीन लोक और तीन काल बदल जाय किन्तु उसका निर्णय न बदले ऐसी दृढ़ श्रद्धा हो गई हो; वही तत्त्वकी परमार्थ श्रद्धा कर सकता है। ग्रन्थकार कहते है कि जिसके तत्त्वस्वरूपका निर्णय है वही वीतरागका सच्चा सेवक है, वही सच्चा जैन है। जिसे सर्वज्ञके सच्चे स्वरूपका निर्णय नहीं हुआ है तथा विशेष साधनका यथार्थ ज्ञान नहीं हुआ है, वह बिना निर्णयके किसका सेवक बनकर दर्शन करता है ? और किसका जप करता है ? अर्थात् जिसे सर्वज्ञके स्वरूपका निर्णय नहीं है वह वीतरागका सेवक नहीं है। वीतराग सर्वज्ञ परमात्माने जो तत्त्व कहा है उसकी जिसे पहचान नहीं है और जिसे ज्ञानमें निर्णय नहीं हुआ है और जो कहता है कि न जाने सर्वज्ञ कैसे होते होंगे ? हमें जब केवलज्ञान होगा तब सर्वज्ञका निर्णय कर लेंगे, तो समझना चाहिये कि यों कहनेवालेके सर्वज्ञकी श्रद्धा ही नहीं है, उसे तत्त्वका निर्णय ही नहीं हुआ—वह जैन नहीं है, वह सर्वज्ञको ही नहीं पहचानता, आत्माको नहीं पहचानता।

सर्वज्ञदेवने विशेष साधनका अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रका स्वरूप बताया है; जन्म-मरणको दूर करनेका उपाय बताया है, जिसे सुनकर यह ख्यालमें आ जाता है कि अहो ! सर्वज्ञदेवके सिवाय इस स्वरूपको दूसरा कोई नहीं कह सकता। अरहन्त भगवानका स्वरूप ऐसा ही होता है, ऐसे सर्वज्ञदेवका निर्णय किये बिना किसके दर्शन करता है ?

अनन्त सर्वज्ञने धर्मका एक ही मार्ग कहा है, धर्मका दूसरा मार्ग हो ही नहीं सकता। सर्वज्ञदेवने आत्माका परमार्थ अर्थात् स्वरूपकी शांति उसका सच्चा मार्ग तीनोंकालमें एक ही प्रकारका बताया है, ऐसे सर्वज्ञका निर्णय किये बिना किसका सेवक बन गया और किसका जप करता है ? जिसका तूं दर्शन करता है और जप करता है उस अरहन्तदेवको तो तूं जानता ही नहीं है तो फिर किसकी भक्ति करता है ?

है अस्ति कथंचित् और नास्ति,
भगवान् तुझ मतमें यह तथास्ति;

इसके उत्तरमें कोई कहते हैं कि हमारे बाप–दादा जो मानते आ रहे हैं वह हम भी मानते हैं तथा हमारे माने हुए गुरु जो कहते थे हम वही मानते हैं और हमारी जातिके अग्रगण्य पुरुष तथा हमारा संप्रदाय इन्हीं देवको मानते हैं इसलिए हम भी मानते हैं और हम सर्वज्ञकी पूजा, दर्शन इत्यादि धर्मबुद्धिसे करते हैं तथा अरहन्तदेवको ही देव मानकर उनकी पूजा और जप करते हैं। अरहन्तके सिवाय दूसरे देवको हम नहीं मानते। पांचसौ या हजार वर्षसे हमारे बाप–दादाओंसे जो प्रथा चली आ रही है उसीके अनुसार हम भी चलते हैं और इसी मार्गसे हमें भी मोक्ष मिल जायगा। इस प्रकार कुछ लोग मात्र अपने कुल समुदाय या संप्रदायके आश्रयसे अथवा मूढ़मतिसे अपनेको धर्मी मान बैठे हैं, किन्तु सर्वज्ञदेवका यथार्थ स्वरूप वे नहीं समझते, वे मात्र नामधारी जैन है, अज्ञानी हैं, जैनधर्मके सच्चे रहस्यकी उन्हें पहचान नहीं है।

उनके लिए शास्त्रकार कहते हैं कि सुनो भैया ! अरहन्तदेव तो सच्चे हैं ही; किन्तु जब तक तुम्हारे ज्ञानमें उसकी सत्यता प्रतिभासित नहीं हो जाती तब तक तुम उसके सच्चे सेवक नहीं हो। सर्वज्ञके स्वरूपका निर्णय किये बिना कोई उसका सच्चा सेवक नहीं हो सकता। जैसे तुम अपने कुलधर्मके अनुसार अथवा पंचायतके नियमानुसार अपने देवको धर्मबुद्धिसे मानते हो उसी प्रकार अन्यधर्मावलम्बी भी अपने कुलादिके अनुसार माने गये कुदेवको धर्मबुद्धिसे पूजते हैं, तब तुममें और उनमें क्या अन्तर रहा ?

अन्यमति सच्चे देवका स्वरूप नहीं जानता, वैसे तूं भी यदि सच्चे देवका स्वरूप नहीं जानता, तो अरहंतदेवकी विशेषता तो तेरे जाननेमें न आई। तूं अरहंतदेवको मानता है, किन्तु अरहंतदेवकी यथार्थता कैसे है वह तो जानता नहीं, तो अपने सच्चे देवका स्वरूप जाने बिना तेरेमें और अन्यमतीमें कौनसा अन्तर रहा ? संसारमें तो सब कहते हैं कि हमारे देवके समान संसारमें अन्य कोई देव नहीं है, इस प्रकार अन्यमती भी अपने माने हुये देवको सच्चा मानते हैं और तुम भी अपने माने हुए देवको सच्चा देव मानते हो; किन्तु उसके स्वरूपको नहीं जानते हो तब फिर बताओ कि तुममें और उसमें क्या अन्तर है ?

यदि कोई यों कहे कि अरहंतदेव और उनका दिगम्बर जैनधर्म ही सत्य है किन्तु जो बापदादोंसे चला आ रहा है उसे हम कैसे छोड़ें ? तो उसके लिए कहते हैं कि अरे मूर्ख ! तेरे बापदादा निर्धन हो तो फिर तूं वह निर्धनताको बदलकर और धनवान होकर बापदादामें फर्क क्यों पैदा करता है ? यहाँ यह क्यों नहीं कहता कि हमारे बापदादाके पास इतना धन था, इसलिए मैं इससे अधिक न रखूँगा। तेरे बापदादा जो धर्म मानते थे, उनसे भी यदि अच्छा और सच्चा धर्म मिलता है और तू उसे नहीं मानता तब समझना चाहिए कि तुझे धर्मकी रुचि ही नहीं है। समयसारकी बात अलौकिक है किन्तु जो पहले देव-गुरु-धर्मके ही स्वरूपको नहीं समझता

(शेष देखे पृष्ठ २१ पर)

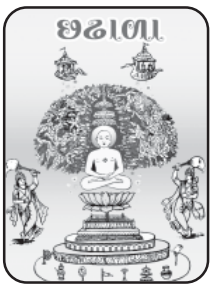

श्री छहढाला पर पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचन

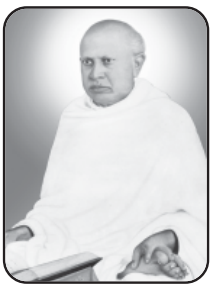

(तीसरी ढाल, गाथा-१)

आत्माके हितरूप मोक्षमार्गका वर्णन

हे जीव ! तू मोक्षपथमें चल

जे जाणतो अर्हंतने गुण द्रव्य ने पर्ययपणे,
ते जीव जाणे आत्मने, तसु मोह पामे लय खरे. (प्रवचनसार ८०)

केवलज्ञानी अरिहंत भगवान, जिनके द्रव्य-गुण और पर्याय तीनों शुद्ध चेतनमय है और जिसमें रागका सर्वथा अभाव है, उन्हें पहिचाननेसे रागसे भिन्न चैतन्यस्वरूप स्वयंका आत्मा अनुभवमें आता है अर्थात सम्यग्दर्शन होता है। स्वयंके आत्माके शुद्धस्वभावका निर्णय या अरिहंतके शुद्ध आत्माका निर्णय, यह दोनों इकट्ठे ही है। रागसे भिन्न ऐसी ज्ञानपर्यायको अंतरमें झुकाकर जब आत्माका अनुभव किया तब साथमें अरिहंतका और सिद्धके शुद्ध आत्माका निर्णय भी यथार्थ हुआ। उससे पूर्व अरिहंतके शुद्ध आत्माका निर्णय करनेका लक्ष था उसे उपचारसे सम्यग्दर्शनका कारण कहा जाता है। जब परलक्षसे हटकर अंतरकी ओर ढला तब आत्मस्वरूपका सम्यक् निश्चय हुआ और तब भूतनैगमनयसे पूर्वके रागमिश्रित निर्णयको उसका कारण कहा। निश्चय बिना व्यवहार कैसा ? निश्चयके लक्ष बिना मात्र परसन्मुखतासे तो अनंतबार अरिहंतदेवकी ओरके विकल्प किये, धारणा की, वह क्यों सम्यग्दर्शनका कारण नहीं हुआ ?–क्योंकि निश्चयका लक्ष नहीं था; निश्चय बिनाका वह सभी वास्तवमें व्यवहाराभास है, यथार्थ अरिहंतका निर्णय उसमें नहीं है। अर्थात् अज्ञानीके शुभरागमें मोक्षमार्गका व्यवहार लागू नहीं होता; मोक्षमार्ग उसे प्रारम्भ ही नहीं हुआ है। रागद्वारा मोक्षमार्ग प्रारम्भ नहीं होता। रागसे हटकर ज्ञान द्वारा अंतरके स्वभावमें मग्न हो तभी शुद्ध आत्माका अपूर्व अनुभव सहित मोक्षमार्ग प्रारम्भ होता है।

ऐसा मोक्षमार्ग जिन्हें प्रकट हुआ है उसके निश्चय और व्यवहार कैसे होते है उसकी यह बात है। मोक्षमार्ग जिसे हुआ उसे जो बात लागु पड़ती है–जो रत्नत्रयकी शुद्धता है वह यथार्थ मोक्षमार्ग है; और जो शुभराग भूमिका अनुसार है वह उपचारसे मोक्षमार्ग है। सत्य

सत् असत्मई भेद रु अभेद,
हैं वस्तु बीच नहिं शून्य वेद ।४२।

मोक्षमार्ग हो वहाँ अन्यमें उपचार लागु होता है। शुद्ध आत्माके आश्रयसे प्रकट हुआ शुद्धभाव-रूप निश्चय मोक्षमार्ग वह ही सत्य मोक्षमार्ग है अन्य कोई यथार्थ मोक्षमार्ग नहीं है। वीतरागमें ऐसी वस्तुस्थिति है; इसके अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रकारसे मोक्षमार्ग सिद्ध होता नहीं है।

अहा, चैतन्य भगवान आत्मा ! जिसको लक्षमें लेते ही आत्मामें आनंद सहित भावश्रुतके अंकुर उदित होते है। भावश्रुत वह केवलज्ञानका अंकुर है; ज्ञानका अंकुर कोई रागके विकल्पमेंसे आता नहीं है। रागमेंसे ज्ञानका अंकुर कदापि उदित होता नहीं है; चैतन्यरत्नाकर उल्लसित होकर उसमेंसे श्रुतका अंकुर आता है। उसके साथकी शुद्धदृष्टि वह सम्यग्दर्शन है, और जितनी रागरहित स्थिरता हुई वह सम्यक्चारित्र है;—ऐसा मोक्षमार्ग है। मोक्षका मार्ग अर्थात् आनंदका मार्ग आतमराम निजपदमें रमें वह आनंदका मार्ग है; परपदमें रमे वह मोक्षमार्ग नहीं, उसमें आनंद नहीं है। रागादिकभाव वह परपद है, उसमें रमे अर्थात् कि उसमें सुख माने उसे मोक्षमार्ग होता नहीं है, मोक्षका मार्ग तो स्वपदमें समाहित है—

कायानी विसारी माया, स्वरूपे समाया एवा... निर्ग्रंथनो पंथ भव–अंतनो उपाय छे.

काया और आत्माकी भिन्नताको जानकर निजस्वरूपमें जो समाहित हुए–लीन हुए ऐसे निर्ग्रंथ–मुनिवरोंका मार्ग वह ही भवअंतका उपाय है, उससे ही मोक्षकी प्राप्ति होती है।

मोक्षके मार्गमें भावश्रुतज्ञान होता है, वह भी आनंदके स्वादसे परिपूर्ण है और स्वसंवेदनरूप प्रत्यक्ष है। जैसे केवलज्ञान प्रमाण है वैसे श्रुतज्ञान भी प्रमाण है, परोक्ष होने पर भी वह प्रमाण है और स्वसंवेदनमें तो वह प्रत्यक्ष भी है। स्वयंके आत्माके अनुभवको साधकजीव स्वसंवेदनरूप प्रत्यक्ष-प्रमाणसे देखता है; उसमें उसे कोई संदेह नहीं है। परोक्षरूप प्रमाणज्ञान भी संदेह बिनाका होता है। केवलज्ञान जैसी ही जातिका, स्वसंवेदन–प्रत्यक्षरूप भावश्रुतज्ञान होता है तभी मोक्षमार्ग होता है, और उस जीवको ही यथार्थ निश्चय-व्यवहार नय होता है। सम्यक्चारित्र वह मुख्य मोक्षमार्ग है। चारित्र अर्थात् स्थिरता;–किसमें ? निजस्वरूपमें। निजस्वरूप क्या है उसके ज्ञान बिना स्थिरता नहीं है।

संसारके कारणरूप ऐसे शुभाशुभ रागसे निवृत्त होकर शुद्ध चैतन्यस्वरूपमें प्रवर्तना वह सम्यक्चारित्र है। ज्ञानपूर्वक ही ऐसा चारित्र होता है, अज्ञानीको होता नहीं।—ऐसा बतलाने हेतु उसे 'सम्यक्' कहा है।

'यह है वह ही' है नित्य सिद्ध,
'यह अन्य भया' यां क्षणिक सिद्ध;

आत्मा ज्ञानधातुकी वीतरागी खदान है, राग उससे पृथक् वस्तु है। रागादि विकल्प वह अचिद्धातु है। अरे ! यह अचिद्धातुका आभास ते देखो ! अज्ञानीको भ्रम होता है कि यह विकल्प आत्मा है। लेकिन भाई ! यह विकल्पमें कोई चेतना नहीं है, स्व-परको जाननेकी जागृति उसमें नहीं है। जागृत चेतनावाला शुद्ध चैतन्य भगवान तू है—कि जिसमें विकल्पका प्रवेश कदापि नहीं है–ऐसे आत्माको पहिचानकर अनुभवमें लेनेके बाद ही उसमें स्थिरतारूप सम्यक्चारित्र होगा। स्ववस्तुके श्रद्धा-ज्ञान बिना लीनता किसमें होती है ? चतुर्थ गुणस्थानमें चैतन्यके श्रद्धा-ज्ञान एक साथ प्रकट होते है। स्वरूपाचरणदशा भी वहाँ प्रकट होती है। मुनिदशारूप चारित्र छठवें-सातवें गुणस्थानमें होता है। इस प्रकार सम्यग्दर्शन-ज्ञान सहितका चारित्र वह मोक्षमार्ग है उसका प्रारम्भ चौथे गुणस्थानसे होता है।

धर्मी जीवको सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान दोनों एकसाथ होते है। सम्यग्दर्शनके साथ जो भावश्रुतप्रमाणज्ञान उसमें ही यथार्थ नय होते है। मोक्षमार्गका उद्यम करनेवाले जीवको नव तत्त्वके निर्णयका विचार, सच्चे देव-गुरु-धर्मके स्वरूपका विचार ऐसे शुभभाव होते है, और भूतनैगमनयसे उसे भी मोक्षमार्गका कारण कहा जाता है। सम्यग्दर्शन-ज्ञानसहितकी भूमिकामें भी ऐसे शुभभावों होते है, लेकिन उससे विरुद्ध (अर्थात् कि कुदेवादिको माननेरूप कि जगतको किसीने बनाया ऐसी विपरीत तत्त्वकी मान्यतारूप) भाव उस भूमिकामें होता नहीं है–ऐसा ज्ञान करानेको उस भूमिकाके शुभभावोंको व्यवहारकारण कहा जाता है। वहाँ मात्र शुभराग नहीं, साथमें शुद्धताके भान सहित उसका आंशिक परिणमन प्रकट हुआ है–ऐसा निश्चय-व्यवहारकी संधि मोक्षमार्गमें है। इसमें निश्चय बिनाके व्यवहारकी तो बात ही नहीं है, और निश्चय सहितका जो व्यवहार है वह भी वास्तविक मोक्षका कारण नहीं है, उपचारसे ही वह कारण है। वास्तविक मोक्षका कारण तो निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र है कि जो आत्माके ही अनुभवरूप है।

मोक्षमार्गमें प्रथम सम्यग्दर्शन पश्चात् सम्यग्ज्ञान ऐसा नहीं है, और प्रथम सम्यग्ज्ञान बादमें सम्यग्दर्शन ऐसा भी नहीं है; शुद्ध आत्माके अवलम्बनसे दोनों एक साथ ही होते हैं, लेकिन दीपक और प्रकाशकी भांति उसमें कारणकार्यपना कहनेमें आता है; सम्यग्दर्शनको कारण और सम्यग्ज्ञानको कार्य कहा जाता है–लेकिन उसमें प्रथम-पश्चात्पना नहीं है, दोनों साथ ही है। स्वज्ञेयको पकड़नेकी ज्ञानके साथ उसकी निर्विकल्पप्रतीति वर्तती ही है। जिसे

नहि है विरुद्ध दोनों स्वभाव,
अंतर बाहर साधन प्रभाव ।४३।

प्रतीत करता है उसे सच्चा ज्ञान भी साथमें ही है। पहिचान बिनाकी श्रद्धा तो खरगोशके शींगकी भांति असत्य कहनेमें आती है।

सम्यग्दृष्टिके ज्ञानमें ही निश्चय और व्यवहार ऐसे दो नय होते हैं। सम्यग्दृष्टिके वे दोनों नय सत्य है। अज्ञानीको एक भी नय सत्य नहीं है। धर्मीके दो नयोंमें जो निश्चयनय है वह तो सत्य वस्तु स्वरूप दर्शाता है और व्यवहार तो निमित्तादिका ज्ञान कराता है। श्रुतज्ञानमें अनंत नय समाहित है, लेकिन साधक जीव अनंत नयके भेद करके जान सकता नहीं है। प्रयोजन सिद्धि हेतु संक्षेपमें दो नय—एक स्वाश्रित स्वरूपको जाननेवाला निश्चयनय; और दूसरा पराश्रितभावको जाननेवाला व्यवहारनय; उसमें निश्चयनय अनुसार जो वस्तुस्वरूप है उसके श्रद्धा-ज्ञान-अनुभव द्वारा मोक्षमार्गकी साधना होती है, क्योंकि वह सत्यार्थ है।

'देह भिन्न केवल चैतन्यका ज्ञान जो...' ऐसी दशा हो तब भावश्रुत-प्रमाणज्ञान होता है और वह निश्चय-व्यवहार दोनोंको यथार्थ जानता है। जब तक शुद्धात्माके अनुभवरूप भावश्रुत प्रकट नहीं हुआ, और रागमें तथा देहमें एकत्वबुद्धिरूप मिथ्यारुचि है तब तक जीवका ज्ञान मोक्षका साधक होता नहीं; परभावोंसे भिन्न होकर स्वद्रव्यकी ओर झुके, तभी वह मोक्षका साधक होता है। उसके अतिरिक्त चाहे कितना भी जानपना या शुभ आचरण हो वह सब बहिर्मुख है। अंतर्मुख चैतन्यसत्ता दृष्टिमें आये बिना मोक्षका मार्ग खुलता नहीं है। और जहाँ मार्ग ही खुला नहीं वहाँ 'यह निश्चय मोक्षमार्ग और यह व्यवहार मोक्षमार्ग' ऐसे विचारका अवकाश ही कहा है? 'मार्ग' हो उसमें निश्चय-व्यवहार लागू होता है न? अहा! अंतरका सत्य मार्गको भूलकर जगत बाह्यमें रागादिका मार्ग मानकर बैठा है। लेकिन बापु! अनंतकालसे ऐसे भाव किये तदपि तेरे हाथमें कुछ भी नहीं आया? 'वह साधन बार अनंत कियो तदपि कछु हाथ हजु न पड्यो।'—इसलिये समझ कि यह मार्ग सत्य नहीं है; सत्य मार्ग उससे कोई विपरीत है। वह मार्ग अर्थात् कि वीतरागविज्ञानको संत यहाँ समझाते है। (क्रमशः) ✻

(पृष्ठ १७ का शेष भाग) (मुक्तिका मार्ग)

उसके तो स्थूल मिथ्यात्वका भी त्याग नहीं है; और यदि कोई जीव मात्र देव-गुरुके शुभरागमें ही रुक जाय तो भी उसे आंतरिक स्वरूप समझमें नहीं आ सकता। यहाँ निश्चय-व्यवहारकी बातका मेल करके मोक्षमार्गी होनेकी बात कही गई है। जैसे दूसरे लोग, बिना समझे ही कार्य किया करते हैं उसीप्रकार यदि तू भी किया करे तो तुझमें और दूसरोंमें कोई फरक ही नहीं कहलाया। सच्चे देव-गुरुके पहचाने बिना तुझमें तथा अन्य धर्मीमें कोई फरक ही नहीं रहा। इसलिए सर्वज्ञदेवकी पहचान करनी चाहिए। (क्रमशः) ✻

एक ही पर्यायमें परस्पर विरुद्ध दो भावको मानना वह मिथ्याश्रद्धा है

अज्ञानी एक ही पर्यायमें दो प्रकार मानता है। एक ही पर्यायमें सिद्धपना और उसी पर्यायमें संसारीपना, पर्यायमें निश्चयसे सिद्धपना और उसी पर्यायमें व्यवहारसे संसारीपना—ऐसा अज्ञानी मानते है, लेकिन उसमें वस्तुस्वरूपका निर्णय करता नहीं है।

पुनः एक ही पर्यायमें मतिज्ञान और केवलज्ञान दो किस प्रकार संभवित है? अज्ञानी मानता है कि वर्तमान पर्यायमें मैं व्यवहारसे मतिज्ञानादि रहित हूँ और निश्चयसे वर्तमान पर्यायमें केवलज्ञानी हूँ, किन्तु इस प्रकार निश्चय-व्यवहार है ही नहीं, एक ही पर्यायमें सिद्धपना और संसारीपना दो नहीं होता है। एक ही पर्यायमें मतिज्ञान और केवलज्ञान कैसे हो सकता है? एक ही पर्यायमें राग और वीतरागता दोनों किस प्रकारसे हो? हाँ, वस्तुमें द्रव्यदृष्टिसे सिद्ध होनेका सामर्थ्य है, और पर्यायमें संसार है, द्रव्यमें केवलज्ञानकी शक्ति है, और पर्यायमें मतिज्ञान आदि अल्पज्ञान है—ऐसा जाने तो यथार्थ है, लेकिन एक ही पर्यायमें दो भाव मानना वह कोई निश्चय-व्यवहार नहीं है, वह तो मिथ्याश्रद्धा है। वह किस प्रकारसे है?

जैसे राजा और रंक, मनुष्यपनेकी अपेक्षासे समान है। वैसे ही सिद्ध और संसारी दोनों जीवपनेकी अपेक्षासे समान कहा है, केवलज्ञानादि अपेक्षासे समानता माने लेकिन ऐसा है नहीं, क्योंकि संसारीको निश्चयसे मतिज्ञानादिक ही है तथा सिद्धको केवलज्ञान है। यहाँ इतना विशेष कि संसारीको मतिज्ञानादिक है वह कर्मके निमित्तसे है। इसलिये स्वभाव अपेक्षासे संसारीको केवलज्ञानकी शक्ति कहे तो उसमें दोष नहीं है, जैसे रंक मनुष्यमें राजा बननेका सामर्थ्य होता है, वैसे यह शक्ति जानना।

पर्याय अपेक्षासे तो छद्मस्थको मतिज्ञानादिक है वह निश्चयसे है। निश्चयसे केवलज्ञानकी शक्ति कहेना वह तो द्रव्यकी अपेक्षासे है, लेकिन पर्यायमें कोई निश्चयसे केवलज्ञान नहीं है। पर्यायमें तो निश्चयसे मति-श्रुतज्ञान ही है।

पुनश्च द्रव्यकर्म-नोकर्म तो पुद्गलकी पर्याय है। इसलिये निश्चयसे तो संसारी जीवसे भी वह भिन्न ही है लेकिन संसारपर्यायके समय वह कर्म-नोकर्मके साथ निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है उसे जानना चाहिये। सिद्ध भगवानकी भांति संसारीको भी कर्मके साथ निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्धको सर्वथा न माने तो वह भ्रम है। हाँ धर्मी जीवकी दृष्टिमें कर्मके साथ निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध छूट गया है। निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्धमें जो

(शेष देखे पृष्ठ ६ पर)

युवा-विभाग

(इस विभागके अंतर्गत मुमुक्षुओंकी पूज्य गुरुदेवश्रीके साथ रात्रिके समय चर्चा हुई, वह दी जा रही है।)

प्रश्न :–वर्तमानमें राग सहित होने पर राग रहित स्वभावकी श्रद्धा कैसे हो सकती है? जब तक हमारी पर्यायमें राग विद्यमान है, तब तक राग रहित स्वभावकी श्रद्धा कैसे हो? पहले राग छूट जाय, तब राग रहित स्वभावकी श्रद्धा हो।

उत्तर :–ऐसे जीव रागको ही अपना स्वरूप मानकर सम्यक् श्रद्धा नहीं करते और पर्यायदृष्टिको छोड़कर स्वभावदृष्टिसे अपने राग रहित स्वरूपका अनुभव नहीं करते। जिस समय क्षणिकपर्यायमें राग है, उसी समय राग रहित त्रिकालीस्वभाव भी साथ में पड़ा है; इसलिये पर्यायदृष्टिको छोड़कर स्वभावकी प्रतीति करने पर उस प्रतीतिके बल पर राग अल्पकालमें टल जायेगा। उस प्रतीतिके बिना तो राग टलनेवाला है नहीं। 'राग टले तो श्रद्धा करे' अर्थात् 'पर्याय सुधरे तो द्रव्यको मानें'–ऐसी मान्यतावाले जीव पर्यायदृष्टि हैं–पर्यायमूढ़ हैं। उन्हें स्वभावदृष्टि नहीं है और वे मोक्षमार्गके क्रमको जानते नहीं हैं, क्योंकि वे सम्यक् श्रद्धासे पहले सम्यक्चारित्र करना चाहते हैं। पर्यायदृष्टिसे अपनेको रागस्वभावी मान लेगा तो राग दूर नहीं हो सकेगा। सम्यक्दृष्टि जीव अभिप्राय-अपेक्षासे वीतराग है और उसी अभिप्रायपूर्वकके विशेष परिणमनसे उसे चारित्र-अपेक्षा भी वीतरागता प्रकट हो जाती है। पहले अभिप्राय-अपेक्षासे वीतरागता प्रकट हुए बिना किसी भी जीवको चारित्र–अपेक्षासे वीतरागता प्रकट नहीं हो सकती। जब तक राग रहेगा, तब तक श्रद्धा सम्यक् नहीं हो सकती–ऐसा जो मानता है, वह श्रद्धागुण और चारित्रगुणके कार्यको भिन्न न मानकर एक ही मानता है; उसको तो श्रद्धाका स्वीकार है और चारित्रका ही और ऐसी स्थितिमें उसे सचमुच आत्माका ही स्वीकार नहीं है।

प्रश्न :–ज्ञानमें राग नहीं ऐसा कहा तो जीवको जहाँ तक राग होगा वहाँ तक वह ज्ञानी नहीं हो सकेगा?

प्रश्न :–ज्ञानमें राग नहीं ऐसा कहा तो जीवको जहाँ तक राग होगा वहाँ तक वह ज्ञानी नहीं हो सकेगा?

पद अेकानेक स्ववाच्य तास,
जिम वृक्ष स्वतः करते विकास;

उत्तर :–भाई ! राग ज्ञानीको अपने ज्ञानभावसे एकमेक नहीं भासता, किन्तु भिन्न ही भासता है अर्थात् ज्ञानी रागमें नहीं, किन्तु ज्ञानभावमें ही है—यह बात बराबर समझमें आवे तो पता लगे कि ज्ञानी क्या करता है? रागके समय ज्ञानी राग करता है अथवा ज्ञान करता है—इसका विवेक अज्ञानीको नहीं होता, क्योंकि उसे अपने राग और ज्ञानकी भिन्नताका भान नहीं है। सम्यक्त्वीको राग होने पर भी उसी समय ज्ञानमें ही एकत्वरूप परिणमन होनेसे और रागमें एकस्वरूप परिणमन नहीं होनेसे वह ज्ञानी ही है।

प्रश्न :–ज्ञानमें राग तो जाना जाता है फिर भी ज्ञानसे राग एकमेक हो गया हो–ऐसा क्यों लगता है?

उत्तर :–भेदज्ञानके अभावसे अज्ञानी राग और ज्ञानकी अति निकटता देखकर उन दोनोंको एकमेक मान लेता है; परंतु राग और ज्ञानका एकत्व है नहीं।

प्रश्न :–क्रोधादिभाव आत्मासे भिन्न वस्तु हैं—ऐसा कहा है। वहाँ क्रोधादिभावको 'वस्तु' क्यों कहा?

उत्तर :–क्रोधादिभावको 'वस्तु' इसलिए कहा कि क्रोधादि अवस्थामें वीतरागी अवस्थाकी नास्ति है, उस एक अवस्थामें अन्य अनंत अवस्थाओंकी नास्ति है और उस अवस्थाकी स्वयंपनेकी अस्ति है—ऐसा उसका अस्ति-नास्तिस्वभाव है, इसलिये वह भी वस्तु है। वह त्रिकाली द्रव्यरूप वस्तु नहीं है, क्षणिक पर्यायरूप वस्तु है। विकार विकारपने है, पर स्वभावपने नहीं है, पूर्व और पश्चात्की अवस्थापने नहीं है, जडकर्मपने नहीं हैं, अर्थात् अपने स्वरूपसे उस विकारकी अस्ति और दूसरे अनन्त पदार्थपने नास्ति है—इस प्रकार अनन्तधर्म उसमें सिद्ध हुए। एक द्रव्यके अनन्तगुण और एक-एक गुणकी अनन्त अनन्त पर्याय, उस एक-एक पर्यायमें अनन्त अविभाग-प्रतिच्छेद और एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद अंशमें दूसरे अनन्त अविभाग-प्रतिच्छेद अंशोंकी नास्ति है—इस प्रकार एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद अंशमें अनंत अस्ति-नास्ति धर्म है; इसलिये क्रोधादिभावोंको वस्तु कहा है।

यह शब्द स्यात् गुण मुख्यकार,
नियमित नहिं होवे बाध्यकार।४४।

प्रशममूर्ति पूज्य बहिनश्रीकी गुरुभक्तिपूर्ण आध्यात्मिक तत्त्वचर्चा

प्रश्न :— *निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध अति घनिष्ट है। एक महापुरुषका वचन जो असर करता है उतना पढ़नेसे नहीं होता।*

समाधान :—तथापि स्वयं स्वतंत्र है। गुरुदेव मार्गको स्पष्ट कर गये हैं, करना अपनेको है।

प्रश्न :— *क्या ज्ञान, दर्शन, चारित्र सभीमें अपने अस्तित्वका ही जोर लेनेका है?*

समाधान :—हाँ, सभीमें अपने अस्तित्वका ही जोर लेनेका है। 'मैं ज्ञायक, मैं चैतन्य' इसप्रकार तू ज्ञायकका (अपना) अस्तित्व ग्रहण कर तो स्वयं जैसा है वैसा प्रकट हो। तू अपना अस्तित्व ग्रहण कर तो जो स्वभाव है वह प्रकटरूप परिणम जायेगा। तूने अपना अस्तित्व ग्रहण नहीं किया इसलिये विभावपर्यायें प्रकट होती हैं। तू अपना अस्तित्व (स्वयं) ग्रहण कर तो उसमेंसे स्वभावपर्यायें प्रकट होंगी।

प्रश्न :— *चिंतवनमेंसे उपयोग बाहर जाये तब क्या करना?*

समाधान :—उपयोग बाहर जाय तब जिसे सहजदशा होती है उसे तो अपनी भेदज्ञान परिणति चलती ही रहती है। जिज्ञासुका उपयोग बाहर जाय तब वह अंतरमें ऐसा भाव रखे कि करना तो कुछ और ही है। उपयोग बाहर जानेपर परके साथ एकत्वबुद्धि होती है, परन्तु 'मैं तो भिन्न चैतन्य हूँ' ऐसे वह भावना रख सकता है। जिसकी सहज परिणति हो उसकी तो बात ही अलग है, उसे तो ज्ञायककी धारा निरन्तर वर्तती ही है। उपयोग बाहर जाय तथापि प्रतिक्षण भेदज्ञान रहता है, उसे स्मरण नहीं करना पड़ता। एकबार स्वभावमें एकत्व हो जाय उसे याद नहीं करना पड़ता कि मैं जुदा हूँ। जब उपयोग बाहर जाय उस क्षण भी ज्ञायककी सहज जुदी धारा चलती ही रहती है।

परन्तु जिसके सहजदशा नहीं है उसका उपयोग बाहर जाय तो भावना रखे कि करना कुछ और ही है, उपयोग अंतरमें जाना चाहिये।

प्रश्न :— *आत्माको प्राप्त करनेमें ध्येय किसका होता है? निश्चयका या व्यवहारका?*

गुण मुख्य कथक तव वाक्य सार,
नहिं पचत उन्हें जो द्वेष धार;

समाधान :—ध्येय निश्चयका होता है। ध्येय निश्चयका रखना। व्यवहारसे निश्चयमें जाया नहीं जाता। निश्चयकी दृष्टि, निश्चयके ओरकी परिणति करे तो निश्चयमें जा सकता है। जो जीव व्यवहारमें सर्वस्व मानते हैं, व्यवहारसे धर्म होता है ऐसा मानते हैं, उन्हें तो कोई अवकाश ही नहीं है। आत्मा स्वयं अनादि–अनंत तत्त्व है; यह विभाव मेरा स्वभाव नहीं है; मैं चेतनतत्त्व हूँ—ऐसी दृष्टि, प्रतीति तथा ऐसा ध्येय होना चाहिये। ऐसी भावना और खटक हो तो पलटकर पुरुषार्थ उपड़ता है। व्यवहारसे निश्चय नहीं होता। निश्चयका ध्येय, दृष्टि एवं भावना रखे तो पलटनेका अवकाश है। व्यवहार तो व्यवहार ही है, बंधरूप है।

सर्वस्वभूत तो आत्मा है। आत्मामेंसे शुद्धपर्याय प्रकटती है। यह शुभ तो शुभ ही है। जबतक शुद्धता नहीं होती तबतक शुभमें खड़ा है और ज्ञान, दर्शन, चारित्रकी भावना किया करता है। परन्तु यथार्थ दर्शन, ज्ञान, चारित्र तो चैतन्यको ग्रहण करनेसे प्रकट होते हैं। आत्मामेंसे ज्ञान–दर्शन–चारित्र प्रकट होते हैं।

प्रश्न :— *चैतन्यको ग्रहण करनेमें पठन, मनन, सत्पुरुषोंका समागम आदिमें विशेषता–महत्त्व किसका है ?*

समाधान :—सब साथ होने चाहिये। पठन–मननादि चैतन्यकी समझके लिये होने चाहिये। आत्माका ग्रहण कैसे हो वह ध्येय रखकर सत्पुरुषोंका समागम, वाणी सब साथ होने चाहिये। गुरुदेवने क्या कहा है ? मार्ग क्या बतलाया है ?—तदनुसार सत्पुरुषके आश्रयपूर्वक अपनी विचारशैलीसे स्वयं निर्णय करके आत्मस्वभावका ग्रहण करना। गुरुदेवने क्या कहा है उसके साथ मिलान करके स्वयं आगे बढ़ना। समझता तो अपने ज्ञानसे है परन्तु गुरुदेवने क्या मार्ग बतलाया है उसे साथ रखकर विचार करता है।

प्रश्न :— *यह तत्त्वके पोषणके लिये एकांत विशेष होना चाहिये, ऐसा जरूरी है ?*

समाधान :—एकांतकी भावना आती है। एकांत ज्यादा होना ही चाहिये ऐसा नहीं है। लेकिन एकांत हो तो विचार करनेका, पठन करनेका एक प्रकारसे साधन बनता है। एकांत होना ही चाहिये, ऐसा नहीं है। किसीको पठन अच्छा लगता है, और किसीको एकांत अच्छा लगे, ऐसे सबको अपनी परिणतिके अनुसार होता है। एकांत हो तो अपनेको विचार–मनन करनेका टाईम ज्यादा मिलता है।

लखि आप्त तुम्हें इन्द्रादिदेव,
पदकमलनमें मैं करहुं सेव ।४५।

प्रौढ व्यक्तियोंके लिए जानने योग्य प्रश्न तथा उत्तर

दिये गये विकल्पोंमेंसे योग्य विकल्प पसंद करके रिक्त स्थानकी पूर्ति किजीये।

(१) जैसे पानी स्वभावसे गरम नहीं है, शीतल है, वैसे यह आत्मा स्वभावसे वीतरागी है, रागी-द्वेषी-मोही नहीं है इसलिए ..... है।(अविशेष, अनन्य, असंयुक्त)

(२) अंतरात्माकी पर्यायें जो प्रगट है उसी समय बहिरात्मा और परमात्माकी पर्यायें शक्तिरूपसे ..... है। (प्रगट, अप्रगट, अभाव)

(३) ..... अनासक्तिसे और कर्मोंके उदयमें बेबस होकर विषयभोग करते है। (मुनि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि गृहस्थ)

(४) योगसार शास्त्रमें योगीन्दुदेवने शास्त्रके प्रारंभमें सर्वप्रथम ..... परमेष्ठीको नमस्कार किये हैं। (अरिहंत, सिद्ध, साधु)

(५) जो शरीरादिसे भिन्न अविनाशी आत्माको जानते नहीं वे उत्कृष्ट तप करने पर भी ..... को प्राप्त नहीं होते हैं। (स्वर्ग, निर्वाण, नरक)

(६) शुद्ध आत्मामें शुद्ध पर्याय ही प्रगट होती है क्योंकि अशुद्ध पर्यायें होनेके लिये ..... द्रव्यका कोई निमित्त नहीं है। (पुद्गल, काल, आकाश)

(७) शरीरका नाश होनेसे मेरी मृत्यु हुई ऐसा मानकर अजीव अवस्थाको जीव स्वयंकी अवस्था मानता है वह ..... तत्त्व सम्बन्धी भूल है।(अजीव, जीव, मोक्ष)

(८) पांच समवायमें पूज्य गुरुदेवश्री ..... पर जोर देते थें। (स्वभाव, काललब्धि, पुरुषार्थ)

(९) जिस अवस्था द्वारा और जिस प्रकार जीवको देखनेमें आता है वैसा ही उसे जान लेनेमें आये उस अवस्थाको ..... स्थान कहते है। (जीव, मार्गणा, गुण)

(१०) जिनेन्द्र पूजा करनेका प्रयोजन ..... प्राप्ति करनेके लिये है। (उत्कृष्ट पुण्य, देवगति, वीतरागता)

(११) छह कारकमें माटी स्वयं घडारूप हुई, उसमें घड़ा माटीसे अभिन्न होने पर भी माटी ही स्वयं घडाका ..... है। (कर्ता, संप्रदान, कर्म)

(१२) .....से कर्मका बंध और मोक्ष कहा है। (परिणाम, भावना, ईच्छा)

(१३) यह हरा है, यह पीला है, इत्यादि विकल्परूप ज्ञेय पदार्थोंमें परिणमित होना वह ..... का भोक्ता है। (ज्ञान, स्वभाव, कर्म)

(१४) सम्यक्रत्नत्रय मोक्षमार्ग है या नहीं ऐसा विकल्प करके एक पक्षको ग्रहण न करना वह ..... मिथ्यात्व है। (संशय, विपरित, अज्ञान)

(१५) ४ से ६ गुणस्थानमें अधिक अधिक ..... उपयोग है। (अशुभ, शुभ, शुद्ध)

(१६) पूज्य बहिनश्रीके वचनामृत बोल–३७३में सभी तालेकी चाबी एक है ..... का अभ्यास करना। (छह द्रव्य, शास्त्र, ज्ञायक)

(१७) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश और काल यह चारों द्रव्यमें एक समान सदृश..... पर्याय हुआ करती हैं। (मलिन, स्वभाव, विभाव)

(१८) ..... शास्त्रके परिशिष्टमें ४७ नयोंका वर्णन आचार्यदेवने किया हैं। (समयसार, प्रवचनसार, नियमसार)

(१९) ज्ञानीकी अशुभसे छूटकर शुभमें प्रवृत्ति करना उसे व्यवहारनयसे ..... कहते हैं। (चारित्र, ज्ञान, दर्शन)

(२०) संज्वलन कषायका मंद उदय सातवेंमेंसे ..... गुणस्थान तक रहता है। (बारहवें, दशवें, तेरहवें)

प्रौढके लिये दिये गये प्रश्नोंके उत्तर

(१) असंयुक्त	(५) निर्वाण	(१०) वीतरागता	(१५) शुभ
(२) अप्रगट	(६) पुद्गल	(११) कर्ता	(१६) ज्ञायक
(३) सम्यक्दृष्टि श्रावक	(७) अजीव	(१२) परिणाम	(१७) स्वभाव
	(८) पुरुषार्थ	(१३) कर्म	(१८) प्रवचनसार
(४) सिद्ध	(९) मार्गणा	(१४) संशय	(१९) चारित्र
			(२०) दशवें

• हे उत्तम मतिमान्! "शुद्ध चिद्रूपोऽहम्" शुद्ध चिद्रूप हूँ, इन छः अक्षरोंका तू निरन्तर ध्यान कर। इस सद्विचारोंसे तुझे भली-भांति समझमें आयेगा कि इस शुद्ध चिद्रूपका स्मरण ही संसारमें सर्वतीर्थोंमें उत्तम तीर्थ है, शास्त्रज्ञानरूप समुद्रमें उत्पन्न हुआ शीघ्र ग्रहण कर लेने योग्य, उत्तम अमूल्य रत्न है, सर्वसुखोंका निधान है, मोक्षपदमें पहुँचानेवाला त्वरित गतिवाला वाहन है, कर्मके समूहरूप धूलको दूर करनेके लिए वायुका चक्र है और संसार परिभ्रमणरूपी वनको जलाकर भस्म करनेके लिए अग्नि है–ऐसा तू निश्चयसे जान।१४। (श्री ज्ञानभूषण, तत्त्वज्ञान तरंगणि, २, गाथा-७)

सुवर्णपुरी समाचार :—

अध्यात्मतीर्थ सुवर्णपुरीका धार्मिक वातावरण अनंत उपकारमय पूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामी एवं उनके अनन्य भक्त पूज्य बहिनश्री चंपाबेनके कल्याणवर्षी पुण्यप्रतापसे, आशीर्वादसे देव-गुरु-शास्त्रकी, धर्मकी आराधनामय रहता है एवं पं. रत्नश्री हिंमतभाई जे. शाहने बनाये हुए सुमधुर काव्यसे वातावरण भक्तिमय रहता है :—

प्रातः : ६-३० से ६-५० : पूज्य बहिनश्रीकी धर्मचर्चाकी ऑडियो-टेप
सुबह : ८-४५ से ९-४५ : परमागम श्री समयसार पर पूज्य गुरुदेवश्रीका (१८वीं बारका) सीडी प्रवचन
दोपहर : ३-०० से ४-००: श्री नियमसार पर पूज्य गुरुदेवश्रीका टेप प्रवचन
दोपहर : ४-०० से ४-३० : श्री जिनेन्द्र भक्ति
रात्रि : ७-३० से ८-३० : श्री पुरुषार्थसिद्धि उपाय पर पूज्य गुरुदेवश्रीका सीडी प्रवचन

❀ श्री सीमंधरस्वामी जिनमंदिरका ८५वाँ वार्षिक अष्टाह्निक महोत्सव ❀

सुवर्णपुरीके श्री सीमंधरस्वामी दिगंबर जिनमंदिरका ८५वाँ वार्षिक अष्टाह्निक महोत्सव माघ कृष्णा-९ ता. २२-२-२०२५, शनिवार से ता. १-३-२०२५, शनिवार, फाल्गुन शुक्ला-२ तक श्री बीस विहरमान जिन मंडल विधान, जिनेन्द्र भक्ति एवं तत्त्वज्ञानकी उपासना आदि विभिन्न कार्यक्रम सह मनाया जायेगा।

❀ श्री पंचमेरु-नंदीश्वर जिनालयका वार्षिक प्रतिष्ठामहोत्सव ❀

श्री पंचमेरु-नंदीश्वर जिनालयका ४१वाँ वार्षिक प्रतिष्ठोत्सव फाल्गुन शुक्ला-३, रविवार ता. २-३-२०२५ से ६-३-२०२५ गुरुवार तक आनंदोल्लास सह विशेष श्री पंचकल्याणक पूजन विधान तथा पूजनभक्तिपूर्वक मनाया जायेगा।

❀ फाल्गुनी नंदीश्वर अष्टाह्निका ❀

सुवर्णपुरीके श्री पंचमेरु-नंदीश्वर जिनालयमें फाल्गुन शुक्ला अष्टमी ता. ७-३-२०२५ शुक्रवारसे ता. १४-३-२०२५ शुक्रवार तक फाल्गुन मासकी नंदीश्वर अष्टाह्निका महोत्सव श्री पंचमेरु नंदीश्वर विधान पूजा-भक्ति आदि विशेष कार्यक्रम सह मनाया जायेगा।

❀ श्री परमागममंदिर-वार्षिक प्रतिष्ठा तिथि :—फाल्गुन शुक्ला १३, ता. ११-३-२०२५ मंगलवारके दिन श्री परमागममंदिरका ५२वाँ वार्षिक प्रतिष्ठा दिन श्री महावीर-कुन्दकुन्द दिगम्बर जैन परमागममंदिरमें पूजा-भक्तिके विशेष कार्यक्रम सह मनाया जायेगा।

❀ नांदीविधान कलश घटपूरणविधि ❀

वसई-मुंबईमें होनेवाले स्फटिकके धातकीखंडके भावि तीर्थंकरकी वेदी प्रतिष्ठा अंतर्गत ता. २९-१२-२०२४ रविवारके दिन सुबह श्री नांदीविधान कलशकी घटपूरणविधि सोनगढमें प्रतिष्ठाचार्य श्री सुभाषभाई शेठ द्वारा वसई, मुंबई, सोनगढके मुमुक्षुगण एवं ब्रह्मचारी बहिनोंकी मंगल उपस्थितिमें सानंद संपन्न हुई।

चोबीसवीं बाल संस्कार आध्यात्मिक ज्ञान शिविर सोनगढमें सानंद संपन्न

परमोपकारी पूज्य गुरुदेवश्री एवं भगवती माताकी पूज्य बहिनश्रीकी साधनाभूमि अध्यात्मतीर्थ सुवर्णपुरी (सोनगढ)में श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट सोनगढ प्रेरित तथा श्री कहान पुष्प परिवार आयोजित चौबीसवीं बाल संस्कार अध्यात्मज्ञान शिविरका छह दिवसीय ता. २५ से ३० दिसम्बर २०२४ तक आयोजन किया गया था। ता. २५-१२-२०२४के दिन शिविरका प्रारम्भ ट्रस्टीगण, आयोजक, शिविरार्थी तथा महेमानोंकी उपस्थितिमें दीप प्रज्वलित करके किया गया। शिविरार्थीके लिये प्रतिदिन सुवर्णपुरीके विभिन्न मंदिरोमें जिनेन्द्र अभिषेक, पूजन, भक्तिका कार्यक्रम रखा जाता था। इस शिविरमें पूज्य गुरुदेवश्रीके सुबह श्री परमात्मप्रकाश, दोपहर श्री प्रवचनसार रात्रिमें पूज्य बहिनश्रीकी तत्त्वचर्चा तथा पूज्यबहिनश्रीके वचनामृत पर विडियो प्रवचन चलते थे। शिविरमें बालकों, वयस्क और बुझुर्गोंको आयु अनुसार दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप, सुख और वीर्य ऐसे छह विभाग करके दिनमें तीन घंटे 'चार अनुयोग' पर विद्वानों द्वारा अध्यापन कार्य कराया जाता था। रात्रिको प्रवचनके पश्चात् सांस्कृतिक कार्यक्रमका आयोजन किया जाता था, जिसमें मुमुक्षु मंडलके बालकों द्वारा भक्ति, एकांकी संवाद, नाटिका, धार्मिक क्वीझ आदि प्रोग्रामका आयोजन किया गया था।

इस शिविरमें २२५ बालकों और अन्य ७०० के करीब युवा और वडीलोंने लाभ लिया था। बालकोंको विशेषरूपसे प्रोत्साहित करनेके लिये उनके लिये टीशर्ट, चार अनुयोगको दर्शाती दैनिक डायरी तथा किटबेग आदि देनेमें आयी थी। ता. ३०-१२-२०२४के दिन पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा प्रतिष्ठित मंदिर, सावरकुंडला, अमरेली, लाठी, कानातलावके मंदिरोके दर्शनका आयोजन किया गया था। ये मंडलों द्वारा बालकोंका और यात्रिकोंका भावभीगा स्वागत किया तथा दर्शन और भक्तिका कार्यक्रम प्रत्येक मंदिरमें रखा गया था। इस मंडलके ट्रस्टीओंने बालकोंके साथ पूज्य गुरुदेवश्री तथा भगवतीमाताके पुराने स्मरण और उस समयके विशिष्ट व्यक्तियोंका धर्मके प्रति अर्पणताका इतिहासका स्मरण किया था।

आयोजकों तथा श्री कहान पुष्प परिवारके कार्यकर्ताओं द्वारा शिविरार्थीओंके लिये आने-जानेकी, आवासकी, भोजनकी तथा यात्राकी सुंदर व्यवस्था की गई थी। इस शिविरके सौजन्यका लाभ (१) मुमुक्षु ऑफ ग्रान्ड रेपीड **U.S.A.** (२) राजुल शाह, फ्लोरिडा **U.S.A.** तथा सह सौजन्यका लाभ (१) श्री नवीनभाई पोपटलाल शाह, (२) श्री भरतभाई कांतिलाल कामदार, चेन्नाई, (३) एक मुमुक्षु भाई, (४) श्री चंदुलाल जगजीवन पारेख परिवारको मिला था।

पूज्य बहिनश्री चंपाबेनका ९३वाँ सम्यक्त्वजयंती महोत्सवकी मंगल पत्रिका लेखनविधि सानंद संपन्न

पूज्य बहिनश्री चंपाबेनका ९३वाँ सम्यक्त्वजयंती महोत्सव श्री बृहद् मुंबई मुमुक्षु मंडल द्वारा मनाया जानेवाला है। इस महोत्सवकी पत्रिका लेखनविधि पोष शुक्ल-१४, ता. ११-१-२०२५, रविवारके दिन सुबह जम्बूद्वीप संकुलमें पूजनके बाद पूज्य गुरुदेवश्रीका सीडी प्रवचन हुआ, तत्पश्चात् सभी मुमुक्षु पूज्य गुरुदेवश्रीके अंतेवासी ब्र. चंदुभाई जोबालियाके निवासस्थान गये थे। वहाँ पत्रिकाको अक्षत पुष्पोंसे बधाई की गई। पश्चात् गाजे-बाजेके साथ पत्रिकाको पूज्य बहिनश्रीके निवासस्थान होते हुए मंडपमें लायी गई, वहाँ प्रथम पूज्य गुरुदेवश्री और बहिनश्रीका मांगलिक पश्चात् पत्रिका लेखनविधि सौजन्यकर्ता श्री वसंतलाल खीमचंद जोबालिया परिवारकी ओरसे श्री कीर्तिभाई जोबालिया द्वारा पत्रिकाका भाववाही वांचन किया गया। पश्चात् पत्रिका लेखनविधि सर्वप्रथम सौजन्यकर्ता परिवार बादमें अन्य महानुभावों द्वारा भजनमंडलीके भक्तिके सूरमें हर्षोल्लास सह सानंद संपन्न हुई।

श्री जम्बूद्वीप-बाहुबली जिनायतन प्रतिष्ठा प्रथम वार्षिक दिन तथा श्री बाहुबली मुनीन्द्र महामस्तकाभिषेक हर्षोल्लासपूर्वक सानंद संपन्न

श्री जम्बूद्वीप-बाहुबली जिनायतन प्रथम वार्षिक दिन पोष शुक्ल-१३, ता. ११-१-२०२५ शनिवारसे पोष शुक्ल-१५ ता. १३-१-२०२५, सोमवार त्रिदिवसीय महोत्सवके रूपमें देश-विदेशसे पधारे हजारों साधर्मीओंके उत्साह सह भव्यतापूर्वक मनाया गया। जिसमें आमंत्रित मुमुक्षुओंने जिनेन्द्रदेवके दर्शन, पूजन, भक्ति और पूज्य गुरुदेवश्रीके भवतापनाशक प्रवचनोंका लाभ लिया था। इस मंगल अवसर पर श्री बाहुबली मुनीन्द्र पर्वत एवं जम्बूद्वीप समग्र संकुलको लाईट आदिसे विशेषरूपसे सुशोभित किया गया था जिसे देखकर मुमुक्षुओंको वर्ष पूर्व हुई प्रतिष्ठाका स्मरण प्रतीत होता था।

ता. ११-१-२०२५के दिन प्रातः मंडपमें पूज्य बहिनश्रीकी विडियो तत्त्वचर्चा, जिनेन्द्र अभिषेक पश्चात् जम्बूद्वीप संकुलमें श्री सीमंधर जिनालयमें पूजन बाद श्री सीमंधर भगवान, श्री पार्श्वनाथ भगवान श्री धातकीखंडके भावि भगवानको प्रातिहार्य छत्र, चामर, भामंडल, कलश और ध्वजा लाभार्थी परिवार द्वारा चढाई गई। इस प्रसंगके विधिविधान प्रतिष्ठाचार्य श्री सुभाषभाई शेठ द्वारा किया गया था। यह त्रिदिवसीय महोत्सवमें पूजन हेतु सीमंधर जिनालय (प्रवचन मंडप)की पूर्व दिशामें पूजन मंडपकी व्यवस्था करनेमें आयी थी जिसमें बैठकर मुमुक्षुओंने पूजनका लाभ लिया था। दोपहरको पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन बाद जम्बूद्वीप संकुलमें भक्ति और शामको मंडपमें सांजी भक्तिका रखी गयी थी। इस प्रसंगमें सुबह पूज्य गुरुदेवश्रीके श्री समयसारजी, दोपहरमें श्री नियमसार तथा रात्रिको पुरुषार्थसिद्धि शास्त्र पर प्रवचन चलते थे।

ता. १२-१-२०२५के दिन सुबह जम्बूद्वीप संकुलमें पूजन, पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन बाद पूज्य बहिनश्री चंपाबेनकी आगामी ९३वीं सम्यक्त्व जयंती महोत्सव पत्रिका लेखन विधि हुई थी। दोपहरके प्रवचन बाद श्री जिनेन्द्र रथयात्राका आयोजन किया गया था। रथमें प्रतिष्ठाके विधिनायक श्री आदिनाथ भगवानको विराजमान किया गया था। भगवानके रथके साथ श्री कुन्दकुन्दाचार्य, पूज्य गुरुदेवश्रीका स्टेच्यु तथा बहिनश्रीके चित्रपटको लेकर बग्गी और भजनमंडलीके भक्तिगान सह अधिक संख्यामें मुमुक्षु चल रहे थे। इसी दिन सांजी भक्तिका आयोजन श्री बाहुबली मुनीन्द्रके समक्ष पहाड पर किया गया था। जिसमें भजनमंडलीके भक्तिगानमें मुमुक्षुओंके अंतरके उल्लाससे झूम उठे थे।

ता. १३-१-२०२५के दिन प्रातः ७.२० से श्री बाहुबली मुनीन्द्र महामस्तकाभिषेकका प्रारम्भ हो गया था जो करीब ९.४५ तक चला था जिसमें अधिक संख्यामें मुमुक्षुओंने लाभ लिया था। तत्पश्चात् पहाड पर श्री बाहुबली मुनीन्द्र समक्ष पूजन और बादमें पूज्य गुरुदेवश्रीका प्रवचन रखा गया था। इसी दिन शामको जम्बूद्वीप संकुलमें आरती भी की गई थी।

महोत्सवकी विशेषताएँ

• बाहरगाँवसे जो मुमुक्षु इस प्रसंगमें आ न सके उनके लिये श्री बाहुबली मुनीन्द्र मस्तकाभिषेक ता. १४ जनवरी से २२ जनवरी तक प्रातः ७.२० से ८.३० तक रखनेमें आया था जिसमें स्थानिक एवं बाहरसे पधारे मुमुक्षु अभिषेक करके हर्षका अनुभव करते थे।

• सांस्कृतिक कार्यक्रममें प्रथम दिन शुक्रवार और रविवारको जो हमारी ओनलाईन पाठशाला चलती है उनके द्वारा ज्ञानकी वृद्धि और आत्माकी रुचि वृद्धिगत हो इस हेतुसे ओनलाईन एवं ओफलाईन धार्मिक

हाउझीका आयोजन किया गया था। जिसका संचालन विद्वान श्री नीतिनभाई शेठ द्वारा सुचारुरूपसे किया गया था। • दूसरे दिन 'जिनागम रहस्य' नामका नाटक प्रस्तुत किया गया था जिसमें ६३ शलाका पुरुष और उनकी आराधनाको दर्शाता प्रथमानुयोग जिसमें कुलकरसे लेकर भगवान आदिनाथका वैराग्य, भरत-बाहुबली युद्धादि प्रसंग संक्षेपमें दर्शाये गये थे। जीवका कर्मके साथका सम्बन्ध और उसकी सूक्ष्मता दर्शाता हुआ कि जिसमें वस्तुस्वरूप, त्रिलोकरचना, भेदाभेद स्वरूपका गणित आदि माध्यमसे दर्शाता हुआ करणानुयोग जिसमें अकृत्रिम जिनालयकी रचना गीत एवं नृत्यके माध्यमसे दर्शायी गई। मोक्षमार्गमें चलनेवाले जीवोंकी अंतरंग बाह्यदशा, चारित्रका वर्णन करता चरणानुयोग जिसमें बाहुबलीका वैराग्य और बारह भावनाका वर्णन किया गया। जिसमें नव तत्त्व, छह द्रव्य, निमित्त-नैमित्तिक, उपादान-निमित्त, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य आदि भाव दर्शाता द्रव्यानुयोग जिसमें आनंदकी परिणति (पूज्य बहिनश्रीको सम्यक्त्वकी प्राप्ति) दर्शायी गई थी। इस नाटकको ९८ पात्र कलाकारो द्वारा प्रस्तुत किया गया जो अति भाववाही और भव्यरूपसे दर्शाया गया था। • तीसरे दिन श्री बाहुबली मुनीन्द्रकी पाषाण से लेकर प्रतिष्ठा (२००८ से २०२४) तककी यात्राकी डोक्युमेन्टरी फिल्म दर्शानेमें आयी थी।

• इस उत्सवमें ता. ११-१-२०२५के दिन गुरु कहान कला संग्रहालयमें इष्टोपदेश ग्रंथके ५१ गाथा पर ५२ चित्र बनाये गये है उसका उद्घाटन श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट और पारमार्थिक ट्रस्टके संयुक्त तत्त्वावधानमें किया गया। जिसमें स्वाध्यायमंदिर ट्रस्टीगण एवं पारमार्थिक ट्रस्टीगण एवं विशिष्ट अतिथि और गणमान्य साधर्मीजन उपस्थित थे। संग्रहालयोंके चित्रोंको निहार कर उनके उत्तम प्रयासकी अनुमोदना की थी।

• यह त्रिदिवसीय महोत्सवमें एक ए.आई. फोटो बुथ कि जो जिनमंदिरके पीछेके भागमें रखा गया था। जिसमें मुमुक्षुओंके फोटो खिंचकर ए.आई. टेकनिकका प्रयोग करके उसको प्रतिष्ठाके पात्र जैसे कि इन्द्र, इन्द्राणी आदि प्रतिष्ठा पात्र अनुरूप बनाकर फोटो मुमुक्षुओंको दिया जाता था। जिसमें अधिक संख्यामें मुमुक्षुओंने फोटो करवाये थे।

• जनकल्याणक ट्रस्ट सम्बन्धित जानकारी स्वाध्यायमंदिर ट्रस्टकी ओरसे दी गई जिसमें ट्रस्टीने कहा कि अधिकसे अधिक संख्यामें मुमुक्षु सोनगढ निवास करके अपनी धर्मसाधना करे। स्वास्थ्य सम्बन्धित अधिक सुविधा अस्पतालमें देनेका प्रयत्न हो रहा है।

• यह कहानी है एक युगपुरुषकी कि जो मनुष्यसे भगवान बननेकी, यह गाथा है धर्म, कर्म और निर्वाणकी, विश्वासको इतिहासको जोड़ती हुई युगयुगांतरसे अंतरसे जागृत जीवित। यह कहानी है आदिपुरुषकी अयोध्यासे लेकर कैलास तककी यात्रा और उनके भव्य पंचकल्याणककी कि जो विगत वर्ष भव्यतासे मनाया गया उसकी एक फिल्म बनाई जा रही है जो नजदीकके भविष्यमें सिनेमाघरमें दिखायी जानेवाली है उसका एक ट्रेलर दिखाया गया था।

• श्री समयसार स्तुतिमें आता है कि ''बनाउं पत्र कुन्दनके, रत्नोंना अक्षरो लखी, तथापि कुन्द सूत्रोंना अंकाये मूल्य ना कदी'' (सुवर्णके पत्र बनाकर रत्नोंके अक्षर लिखे जाय तदपि कुन्दसूत्रोंका मूल्य अंकित नहीं किया जा सके।) यह भावना श्री राजेशभाई संघवी, मुंबईको कई सालोंसे चल रही था उनकी यह भावना साकार हो रही है। सुवर्णके पत्र पर हीरोंसे जड़ित अक्षरोंमें श्री समयसारजी जिनवाणीकी ४१५ गाथाएँ उत्कीर्ण किये जानेवाले है जो भविष्यमें प्रसंगोपात दर्शनार्थ रखा जायेगा।

सोनगढ मेसेज स्पर्धा-२०२५

सौजन्यकर्ता :
नमन, नमिता भावेश भायाणी, बोरीवली

आजके युवावर्गमें स्वाध्यायकी अभिरुचि वृद्धिगत हो यह भावनाको ध्यानमें रखते हुए इस सालसे सोनगढ मेसेज स्पर्धामें मुमुक्षुगण निम्नोक्त दो स्पर्धामेंसे किसी एक स्पर्धामें भाग ले सकेंगे ।

स्पर्धा-१

१) (i) सोनगढ मेसेज स्पर्धा-२०२५में भाग लेनेके लिए कमसे कम ३०० मेसेज स्वहस्ताक्षरमें तारीखके साथ लिखना आवश्यक है । स्पर्धाका समय १-१-२०२५ से २०-१२-२०२५ ।

३०० मेसेज लिखकर नोटबुक ता. २५-१२-२०२५ तक सोनगढ भेजनेवाले (इस स्पर्धामें किसी भी उम्रके मुमुक्षु भाग ले सकेंगे ।) प्रत्येकको रुपये ३००/-का प्रोत्साहन इनाम दिया जाएगा ।

(ii) जिन स्पर्धकोंने अपनी मेसेज बुकको विशेषरूपसे सुशोभन की होगी उन्हें निम्नलिखित पुरस्कार दिया जाएगा ।

(A) १८ वर्ष तकके बालकोंका विभाग : प्रथम २०००/-, द्वितीय १५००/-, तृतीय १०००/- रुपये
(B) १८ से ३५ वर्ष तकके उम्रवाले मुमुक्षुका विभाग : प्रथम २०००/-, द्वितीय १५००/-, तृतीय १०००/- रुपये (C) ३५ वर्षसे अधिक उम्रवाले मुमुक्षुका विभाग : एक इनाम १५००/- रुपये ।

स्पर्धा-२

२) (i) मेसेज स्पर्धा-२०२५में भाग लेनेके लिये सोनगढ मेसेजमेंसे **PPT Presentation** तैयार करना होगा ।

(ii) संपूर्ण वर्षमें आनेवाले सोनगढ मेसेजमेंसे कोई एक **Theme** पर **PPT** बनानेकी होगी । जैसे कि पूज्य गुरुदेवश्री, पूज्य बहिनश्री, मुनिराज, शास्त्र ।

(iii) **PPT** की कमसे कम १० और अधिकसे अधिक १५ **Slide** बनानेकी होगी । **PPT** बननेके बाद उसका तीन मिनिटका एक विडियो बनाना होगा । जिसमें स्पर्धकको अपनी **PPT** के विषयमें समझाना होगा । यह **PPT** और विडियो सोनगढके **email : contact@kanjuswami.org** पर ता. १-१२-२०२५ तक भेजना होगा । जिसमेंसे उत्तम **PPT** पसंद करके दिसम्बर-२०२५ बाल शिविरके समय स्क्रीन पर दिखायी जायेगी ।

(iv) **PPT** और **Slide** उपरोक्त अनुसार बनानेवाले प्रत्येकको रुपया ३००/– का प्रोत्साहन इनाम दिया जायेगा ।

(v) जिन मुमुक्षुओंने **PPT** की **Slide** और विडियो बनाया होगा उसमेंसे प्रथमको रुपया २०००/– और द्वितीयको रुपया १०००/– इनाम दिया जायेगा ।

(३) सोनगढ मेसेज सुविधा **Whats App**में प्रारंभ करनेके लिए अपना

१. नाम ..... २. गाँव/शहरका नाम : .....

३. गुजराती/हिन्दी .... ४. मोबाईल नंबर : .....का

विवरण (Details) **Whats App** से **Mo 9276867578 / 9322281129** पर भेजे ।

मेसेज सम्बन्धित जानकारी हेतु उपरोक्त मोबाईल नं. पर फोन करना अथवा **cotact@kanjiswami.org** पर **email** करनेकी विनती है ।

नया रजीस्ट्रेशन करानेवाले मुमुक्षुओंको प्रातः मेसेज एवं सायं सोनगढ रत्नकणिकाका स्वाध्यायका लाभ मिलेगा । तथा प्रत्येक महिनेकी १ तारीखको आत्मधर्मकी सोफ्ट कोपी भी मिलेगी ।

बृहद् मुंबई दिगम्बर जैन मुमुक्षु मंडल
सम्यक् भक्तिभाव सह अध्यात्म अतिशय तीर्थ
सुवर्णपुरीमें सानंद मना रहे है

शुद्धात्मदृष्टिवंत पूज्य बहिनश्री चंपाबेनका ९३वाँ

* सम्यक्त्वजयंती महोत्सव *

भवान्तकार एवं स्वानुभवमुद्रित कल्याणमूर्ति सम्यग्दर्शनका अनुपम मार्ग दिखाकर जिन्होंने हम पर अनंत उपकार किये हैं ऐसे हमारे परम-तारणहार पूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामीकी 'भावीतीर्थंकरद्रव्य'रूप सातिशय महिमा प्रकाशित करनेवाली एवं स्वयंके शुद्धात्माभिमुखी उग्र पुरुषार्थ द्वारा जिन्होंने १९ वर्षकी लघुवयमें वि.सं. १९८९ फाल्गुन कृष्ण १०के दिन वांकानेरमें स्वयंकी परिणतिमें स्वानुभूति सह सम्यग्दर्शन प्रकट किया वे उपकारमूर्ति पूज्य बहिनश्री चंपाबेनकी ९३वीं वार्षिक 'सम्यक्त्वजयन्ती'का यह मंगल अवसर ता. २०-३-२०२५, गुरुवारसे ता. २४-३-२०२५, सोमवार—पाँच दिन तक है। यह पंच दिवसीय महोत्सव श्री जिन सहस्रवसुनाम पूजा, परमकृपालु पूज्य गुरुदेवश्रीके सम्यक्त्वमहिमा भरपूर सम्यक्त्वमहिमा भरपूर आध्यात्मिक सीडी प्रवचन, देव-गुरु-भक्ति, यात्राकी विडियो द्वारा पूज्य गुरुदेवश्रीके पावन दर्शन, पूज्य बहिनश्रीकी स्वानुभवरसभरी विडियो धर्मचर्चा, धार्मिक शिक्षण वर्ग, विशेष भक्ति, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि अनेकविध रोचक कार्यक्रम सह श्री बृहद् मुंबई दिगम्बर मुमुक्षु मंडल द्वारा आनंदोल्लास सह सोनगढमें मनाया जायेगा। सम्यग्दर्शनकी महिमाके इस स्वर्णिम शुभ अवसर पर समस्त मुमुक्षु समाजको सोनगढ़ पधारनेका हार्दिक निमंत्रण है।

• निमंत्रण पत्रिका—लेखनविधि ता. १२-१-२०२५, रविवारके दिन सोनगढ़में सानंद संपन्न हुई।

निमंत्रक
बृहद् मुंबई दिगम्बर जैन मुमुक्षु मंडलके
जय-जिनेन्द्र

श्री जम्बूद्वीप स्थित शाश्वत जिनेन्द्रादि भगवंत और श्री बाहुबली मुनीन्द्र प्रतिष्ठाका प्रथम वार्षिक महोत्सव

३६
आत्मधर्म
फरवरी २०२५
अंक-६, वर्ष १९

Posted at Songadh PO
Publish on 5-2-2025
Posted on 5-2-2025

Registered Regn. No. BVR-368/2024-2026
Renewed upto 31-12-2026
RNI Registration No. GUJHIN/2006/18882
वार्षिक शुल्क 9=00 आजीवन शुल्क 101=00

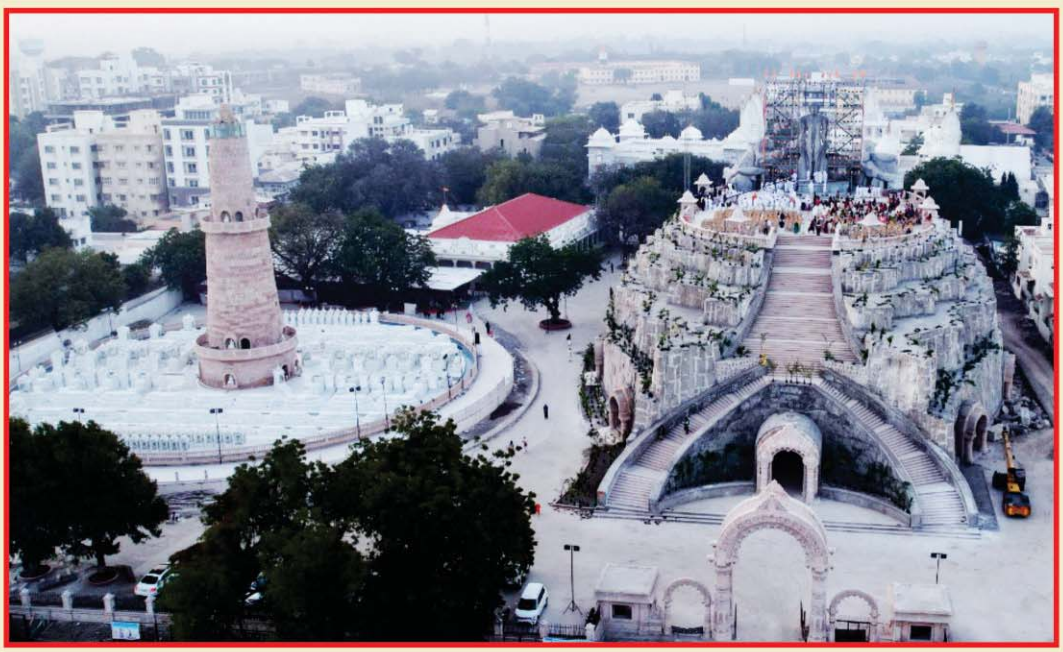

Printed & published by Navin Popatlal Shah on behalf of shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust and Printed at Smruti Offset, 13, Kahanwadi, Ankur School Road At-Songadh Pin-364250 and published from Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust At-Songadh, Ta. sihor, Dist. Bhavnagar Pin-364250.

Editor : Rameshchandra Vrajlal Shah.

If undelivered Please return to :—
Shri Dig. Jain Swadhyay Mandir Trust
SONGADH-364 250 (INDIA)
Phone No. (02846) 244334
Fax (02846) 244662

www.kanjiswami.org
email : contact@kanjiswami.org